"हिन्दोस्तानी राज्य और क्रांति" पर, नवंबर 2002 में
हुई कानफरेंस में
हिन्दोस्तान की कम्युनिस्ट ग़दर पार्टी
के महासचिव
कामरेड लाल सिंह
द्वारा दिया गया
मुख्य भाषण

पूंजीवाद का संकट और हिन्दोस्तानी राज्य का खतरनाक रास्ता यह दिखाता है कि कम्युनिस्टों द्वारा इंकलाब के लिये तैयारी करना बेहद जरूरी है!

पूंजीवाद का संकट और हिन्दोस्तानी राज्य का खतरनाक रास्ता यह दिखाता है कि कम्युनिस्टों द्वारा इंकलाब के लिये तैयारी करना बेहद जरूरी है!

"हिन्दोस्तानी राज्य और क्रांति" पर, नवंबर 2002 में हुई
कानफरेंस में हिन्दोस्तान की कम्युनिस्ट ग़दर पार्टी के
महासचिव कामरेड लाल सिंह द्वारा दिया गया मुख्य भाषण

हिन्दोस्तान की कम्युनिस्ट ग़दर पार्टी
नई दिल्ली, दिसम्बर 2002

प्रथम प्रकाशनः दिसंबर 2002

प्रकाशक की अनुमति से और सही हवाला देकर,
इस दस्तावेज़ का कोई भी हिस्सा अनुवाद किया जा सकता है या दुबारा छापा जा सकता है।

मुल्य रु• 25

प्रकाशकः

हिन्दोस्तान की कम्युनिस्ट ग़दर पार्टी,
E-392, संजय कालोनी, ओखला फेस – II,
नई दिल्ली 110020

वितरकः

लोक आवाज़ पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स
E-392, संजय कालोनी, ओखला फेस – II,
नई दिल्ली 110020

साथियों,

"पूंजीवाद का संकट और हिन्दोस्तानी राज्य का खतरनाक रास्ता यह दिखाता है कि कम्युनिस्टों द्वारा इंकलाब के लिये तैयारी करना बेहद जरूरी है!" यह भाषण हिन्दोस्तान की कम्युनिस्ट ग़दर पार्टी के महा सचिव, कामरेड लाल सिंह ने, केन्द्रीय कमेटी की ओर से, नवंबर 2002 में हिन्दोस्तानी कम्युनिस्टों की एक गोष्ठी में दिया था। हिन्दोस्तानी राज्य और इंकलाब से संबंधित मुद्दों पर चर्चा करने के लिये बुलाई गई इस गोष्ठी के आयोजक लोक आवाज़ पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रिब्यूटर्स थे। मजदूर एकता लहर और पीपल्स वायस के लेखकों, पाठकों और वितरकों को सैद्धान्तिक और विचारधारात्मक तौर पर लैस करना इस गोष्ठी का मुख्य मकसद था।

भाषण के बाद तीन दिन तक चर्चाएं चलीं, जिनमें अलग–अलग पार्टियों और दलों से, कम्युनिस्ट आन्दोलन के कार्यकर्ताओं ने भाग लिया। गोष्ठी के समाप्त होने पर, उसमें भाग लेने वालों ने यह फैसला किया कि कम्युनिस्ट आन्दोलन के अन्दर सैद्धान्तिक और विचारधारात्मक सवालों पर चर्चा को जारी रखा जायेगा तथा और गहराई तक ले जाया जायेगा। साथ ही साथ, मजदूर वर्ग की राजनीतिक एकता की फौरी समस्या को हल करने के लिये आपस में एकता मजबूत की जाएगी। कम्युनिस्ट आन्दोलन के अन्दर जो खतरनाक धारा है, "कम बुरे" सरमायदारों के पीछे तथा हिन्दोस्तानी राज्य की "धर्म निरपेक्ष बुनियादों" की हिफाज़त में मजदूर–किसान को लामबंध करने की धारा, उसके खिलाफ़ संघर्ष को और तेज़ करने का भी फैसला किया गया।

इस भाषण को संपादित रूप में प्रकाशित किया जा रहा है, ताकि सभी हिन्दोस्तानी कम्युनिस्ट इस पर चर्चा कर सकें। हिन्दोस्तान की कम्युनिस्ट ग़दर पार्टी की केन्द्रीय कमेटी अपने सभी सदस्यों और समर्थकों को अह्वान देती है कि इस प्रकाशन में पेश किये गये विचारों, तर्कों व नतीजों का अध्ययन और चर्चा करें।

हिन्दोस्तानी राज्य और क्रान्ति पर कानफरेंस में हिन्दोस्तान की कम्युनिस्ट ग़दर पार्टी के महासचिव, कामरेड लाल सिंह का मुख्य भाषण, नवंबर 2, 2002

साथियों,

देश के कोने कोने से और विदेश से भी आये हुये कम्युनिस्ट इंकलाबियों की इस सभा में अपनी बात रखते हुये मुझे बहुत फ़क्र महसूस होता है। आपका इस सभा में भाग लेना इस बात का प्रतीक है कि आप में यह गहरा विश्वास है कि हिन्दोस्तान को तब तक बचाया नहीं जा सकता, जब तक इंकलाब के जरिये प्रगति का दरवाजा नहीं खोल दिया जाता। हिन्दोस्तान को तड़पाने वाली सारी समस्याओं को हल करने का एक ही रास्ता, सामाजिक और आर्थिक इंकलाब, इसकी तमन्ना ही आज हम सब को यहां खीच लायी है।

हम आज यहां ऐसे वक्त पर इकट्ठे हुये हैं जब हिन्दोस्तान के हुक्मरान देश को एक बहुत ही खतरनाक दिशा में ले जा रहे हैं। आज वक्त की यह मांग है कि हम हिन्दोस्तानी कम्युनिस्ट आगे आयें और एकजुट होकर मजदूर वर्ग को अगुवाई दें। आप सभी को मैं बधाई देता हूं कि इस बेहद जरूरत के समय पर कम्युनिस्ट आन्दोलन के सामने आयी इस जिम्मेदारी को निभाने के लिये आप आगे आये हैं।

साथियों,

आप जनता के बीच में पार्टी की लाइन के जीते–जागते रूप हैं – आप मजदूर वर्ग और सभी शोषित–पीड़ित जनता को सर्वहारा इंकलाब के रास्ते पर लाने के लिये उत्साहित करते हैं, प्रचार करते हैं, संगठित करते हैं। आप मजदूर वर्ग आंदोलन में इंकलाबी सोच को लेकर जाते हैं। आप मजदूर एकता लहर और पीपल्स वायस के पाठक, लेखक और वितरक हैं। इस अखबार को अपना साधन बनाकर, मजदूर वर्ग के जागरूक सदस्यों को उनकी अगुवा पार्टी के युनिटों में एकजुट और संगठित किया जाता है। हिन्दोस्तानी राज्य और इंकलाब के बारे में कुछ बहुत ही महत्वपूर्ण सवालों पर चर्चा और फैसला करके हमें अपना दिमाग तेज़ करना होगा, हमारी सोच और काम की एकता को और मजबूत करना होगा। इससे हमें विज्ञान की ताकत मिलेगी, हमारा विश्वास और मजबूत होगा। ये दोनों चीजें बहुत जरूरी हैं ताकि हम वर्ग संघर्ष को सही ढंग से अगुवाई दे सकें। मैं इस कान्फरेंस के आयोजक, लोक आवाज पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रिब्यूटर्स, को इस सही समय पर ली गई पहल के लिये बधाई देता हूं।

साथियों,

आज दुनिया की हालत काफी गंभीर है। पूंजीवादी व्यवस्था गहरे संकट में है और आसमान में जंग के बादल छाये हुये हैं। इन हालतों में, हिन्दोस्तान के सरमायदार बड़े जोखिम भरे रास्ते पर आगे बढ़ रहे हैं। वे अमरीकी साम्राज्यवाद और दूसरी साम्राज्यवादी ताकतों के साथ मिलजुल कर काम कर रहे हैं। वे खुद दुनिया में एक बड़ी साम्राज्यवादी ताकत बनना चाहते हैं, और अपने इस मंसूबे को पूरा करने की कोशिश कर रहे हैं। साम्राज्यवादी ताकतें दुनिया को आपस में फिर से बांटने की साजिशें बना रही हैं। हिन्दोस्तानी सरमायदार और हिन्दोस्तानी राज्य इन साजिशों में इतनी बुरी तरह फंसे हुये हैं कि खास तौर पर दक्षिण एशिया में बड़ी खतरनाक हालत पैदा हो गई है।

हिन्दोस्तान इस संकट से बाहर निकल सकता है, इन खतरों को टाला जा सकता है। इस हालत से हम बच सकते हैं, लेकिन एक शर्त पर। यह शर्त है, कि मजदूर वर्ग को आगे आकर सभी शोषित–पीड़ित जनता के संघर्ष को अगुवाई देनी होगी। आज वक्त की जरूरत भी

है, मांग भी, कि हम कम्युनिस्ट आगे आयें और मजदूर वर्ग को अगुवाई दें, ताकि समाज के हितों के खिलाफ जो चारों तरफ से हमले किये जा रहे हैं, उनका डटकर मुकाबला करें। समाज को संकट से निकालने के लिये एक फौरी कार्यक्रम के इर्द तमाम शोषित–पीड़ित लोगों को लामबंध करने में हम मजदूर वर्ग को अगुवाई दें। आज यह वक्त की मांग है कि हम मजदूर–मेहनतकशों को इंकलाब और समाजवाद के रास्ते पर ले जाने में अगुवाई दें।

इस फौरी काम को करने के लिये यह जरूरी है कि कम्युनिस्ट आंदोलन में से उन सारी धाराओं को पूरी तरह बाहर निकाल दिया जाये, जो पूंजीवाद और सरमायदारों के वर्तमान हिन्दोस्तानी राज्य से समझौता करते हैं और इस तरह सर्वहारा इंकलाब को कामयाब होने से रोकते हैं। सरमायदारों की सोच के साथ किसी भी तरह से समझौता करने वाली सभी धाराओं को पूरी तरह पीछे छोड़कर ही कम्युनिस्ट आंदोलन एकजुट ताकत के रूप में उभर कर आगे आयेगा। ऐसा करके ही कम्युनिस्ट आंदोलन मजदूर वर्ग को अगुवाई दे पायेगा और सभी शोषित–पीड़ित जनता को अपने साथ जोड़ सकेगा। अब वक्त आ गया है कि कम्युनिस्ट आंदोलन में उन सब का मुखौटा उतारा जाये, जो पूंजीवाद में कुछ अच्छाई देखते हैं, जो सरमायदारों में कुछ अच्छाई देखते हैं या हिन्दोस्तानी राज्य में कुछ अच्छाई देखते हैं, और ऐसा प्रचार करके मजदूर–किसान को कहते हैं कि सरमायदारों के "प्रगतिशील हिस्से" का समर्थन करो।

साथियों,

दुनिया भर में पूंजीवाद का आर्थिक संकट और गहरा होता जा रहा है। दुनिया भर में उत्पादन लगभग स्थगित है, क्योंकि विस्तृत तौर पर मंदी फैली हुई है। दुनिया के लगभग सभी विकसित देशों में सबसे बड़ी पूंजीवादी कंपनियों के मुनाफे बहुत घट गये हैं। विकसित पूंजीवादी अर्थव्यवस्थाओं में औद्योगिक क्षमता का इस्तेमाल नहीं हो रहा है, बेरोजगारी फैली हुई है और दिन–ब–दिन बढ़ती जा रही है। 1930 के दशक की आर्थिक मंदी के बाद, इतना भयानक आर्थिक संकट नहीं हुआ है, जितना आज 2002 में शेयर बाजारों के गिरावट से देखने में आता है। कुछ इसी तरह की हालतों में ही फाशीवाद पैदा हुआ था और साम्राज्यवादियों ने 1939 में दूसरा विश्वयुद्ध छेड़ा था।

जाना जाता है कि अमरीका में कंपनियों के मुनाफे जहां सन् 2000 में 88 अरब डालर थे, तो सन् 2001 में 35 अरब डालर तक गिर गये हैं। जर्मनी के तीसरे नंबर पर माने जाने वाले बैंक, कॉमर्सबैंक, के बारे में कहा जा रहा है कि अक्तूबर की शुरूआत में, बस एक हफ्ते के अंदर ही, उसकी कीमत का एक–चौथाई हिस्सा घट गया। लाखों–लाखों मजदूरों और मध्यम वर्ग के परिवारों की जिंदगी भर की बचत का पैसा पल भर में गायब हो गया। सरमायदारों के अर्थशास्त्री कह रहे हैं कि और भी बुरा होने वाला है, पूरे बैंक क्षेत्र में भारी संकट का डर है।

मुनाफों में यह गिरावट पूंजीपति वर्ग के न चाहने के बावजूद हुआ है। साम्राज्यवादी ताकतें और इजारेदार कंपनियां अपने लिये ज्यादा से ज्यादा मुनाफा दर बनाए रखने की चाहे कितनी कोशिश कर लें, पर वे पूंजीवाद के उस नियम को नहीं रोक सकते, जिसे कार्ल मार्क्स ने 150 साल पहले समझाया था, कि पूंजीवादी मुनाफे के औसतन दर के गिरने की प्रवृत्ति है। पूंजीवादी धंधे का हर चढ़ाव पहले की तुलना में कम और अनिश्चित होता है। हर उतार पहले की तुलना में ज्यादा कठोर और तबाहकारी होता है।

दुनिया के पूंजीवादी आर्थिक संकट के असर हिन्दोस्तान में भी दिख रहे हैं। पिछले दो सालों में औद्योगिक विकास की गति धीमी हो गई है। बेरोजगारी बढ़ गई है। कारोबार बंद किये जा रहे हैं और मेहनतकशों की रोजी–रोटी खतरे में है। जब से हिन्दोस्तान विश्व व्यापार संगठन (WTO) में शामिल हुआ है और घरेलू बाजार को आयात की गई चीजों के लिये खोल दिया गया है, तब से किसान और छोटे उत्पादक अधिक संख्या में तबाह हो रहे हैं। देश के बहुत से इलाकों में सूखा पड़ने की वजह से देहातों में आमदनी घट गई है और आर्थिक संकट ज्यादा गहरा हो गया है। देहातों में लोग या तो भूखे मर रहे हैं या खुदकुशी कर रहे हैं। दूसरी तरफ, हिन्दोस्तानी राज्य के गोदाम गेहूं–चावल से भरपूर हैं।

सार्वजनिक कंपनियों के निजीकरण से एक तरफ तो हिन्दोस्तान के सारे इजारेदार घराने और बहुराष्ट्रिक कंपनियां उत्पादन के इन साधनों को कौड़ी के भाव हथिया रहे हैं। दूसरी तरफ मजदूर बड़ी संख्या में बेरोजगार हो रहे हैं, बड़ी तंगी महसूस कर रहे हैं। सरमायदार मजदूरों के हकों पर और तेजी से हमले करते जा रहे हैं।

सरमायदार कह रहे हैं कि ऐसा करना जरूरी है ताकि हिन्दोस्तानी पूंजी दुनिया के बाजार में होड़ लगाने के काबिल हो।

जब कि औसतन मुनाफा दर घट रहा है, तो पूंजीवादी इजारेदार कंपनियां अपने ज्यादा से ज्यादा मुनाफे दर को बनाये रखना चाहती हैं। इन हालातों में, साम्राज्यवादी राज्यों के बीच आपस की लड़ाई और तेज हो गई है, इस बात पर कि दुनिया के अलग–अलग देशों के कच्चे माल के स्रोतों, बाजारों और इलाकों पर कौन कब्ज़ा करेगा। इसी लालच से, दुनिया की सबसे बड़ी–बड़ी ताकतें दुनिया को आपस में फिर से बांटने के लिये जंग छेड़ रही हैं और छेड़ती आई हैं। आज हम देख रहे हैं कि अमरीकी साम्राज्यवाद "आतंकवाद पर जंग" के बहाने, ईराक, उत्तरी कोरिया और दूसरे देशों पर हमला करने की पूरी तैयारी कर रहा है। यह साफ–साफ देखने में आता है कि साम्राज्यवाद, जो पूंजीवाद का सबसे ऊंचा स्तर है, उसे अपनी जिंदगी को और लंबा खींचने के लिये, दूसरे देशों पर कब्जा करने के लिये जंग छेड़ने की जरूरत है।

हिन्दोस्तानी राज्य दक्षिण एशिया में साम्राज्यवाद का पहरेदार बनकर आगे आ रहा है। हिन्दोस्तानी राज्य एक जंग उकसाने वाली परमाणु ताकत है, जिससे हमारे सभी पड़ौसी देशों के लोग डरते और नफ़रत करते हैं। हिन्दोस्तान और अमरीका के बीच फौजी तालमेल और खुफिया सहयोग बढ़ता जा रहा है। साथ ही साथ, कुछ खास मुद्दों पर इन दोनों का आपसी मतभेद भी है। साथ ही साथ, हिन्दोस्तानी राज्य यूरोपीय संघ, रूस, ईरान, ईराक और दूसरे एशियाई राज्यों के साथ भी समझौते कर रहा है। हिन्दोस्तान के बड़े सरमायदार, अमरीका की अगुवाई में किये जा रहे "आतंकवाद पर जंग" में बड़े उत्साह से हिस्सा लेना चाहते हैं। वे अफगानिस्तान के फिर से निर्माण करने में, नेपाल की जनता के संघर्षों को कुचलने आदि में, हिस्सा लेने में बहुत इच्छुक हैं। ये सब दर्शाते हैं कि हिन्दोस्तान कितनी खतरनाक दिशा में जा रहा है।

मजदूर–मेहनतकश निजीकरण, उदारीकरण और वैश्वीकरण के नाम से किये जा रहे हमलों का विरोध कर रहे हैं। वे अधिक से अधिक संख्या में संघर्ष में कूदकर, सड़कों पर निकल रहे हैं। दुनिया के सभी पूंजीवादी राज्यों में सरकारें ऐसे कानून पास कर रही हैं, जिनसे मजदूर–मेहनतकशों के हकों को नकारा जा रहा है। यह उन देशों में भी हो रहा है जिन्हें "सबसे लोकतांत्रिक" राज्य कहा जाता है। मजदूर–मेहनतकश पूंजीपतियों

के इन हमलों का विरोध कर रहे हैं। इस विरोध को कुचलने और गलत रास्ते पर ले जाने के लिये साम्राज्यवादी और दुनिया के प्रतिक्रियावादी बेहद घिनौने, मध्यकालीन और बर्बर तरीके अपना रहे हैं। विचारधारा, धर्म, जात, नस्ल आदि के आधार पर व्यक्तियों और पार्टियों पर बेरहमी से हमला किया जा रहा है। अपने आप को "सभ्य" कहलाने वाले समाजों में नस्लवाद और नस्लवादी हमले बढ़ रहे हैं। खास राष्ट्रों और लोगों को "दुष्ट" कहा जा रहा है, और इसे बहाना बनाकर उन पर क्रूज़ मिसाइल छोड़ा जा रहा है।

अमरीकी साम्राज्यवाद और दुनिया के दूसरे साम्राज्यवादी हिटलर और मुसोलिनी के तरीकों को और कुशलता से लागू कर रहे हैं। साम्राज्यवादी मीडिया के विभिन्न चैनलों से झूठा प्रचार और झूठी अफवाहें फैलाई जाती हैं। दुनिया के हर जायज संघर्ष को नस्लवादी और साम्प्रदायिक रंगों से रंगा जा रहा है। एशिया और सारी दुनिया पर अपना रौब जमाने की अमरीकी साम्राज्यवाद की कोशिशों को "आतंकवाद पर जंग" और "इस्लामी कट्टरवाद पर जंग" बताया जा रहा है।

हिन्दोस्तान में भी, हुक्मरान सरमायदार साम्प्रदायिक हिंसा और राजकीय आतंकवाद का सहारा ले रहे हैं, पाकिस्तान के खिलाफ़ शोवींवादी, साम्प्रदायिक प्रचार और जंग भड़काऊ प्रचार कर रहे हैं। उनका इरादा है कि "दूसरे दौर के सुधारों" के खिलाफ जनता के संघर्षों को कुचल दिया जाये, गुमराह कर दिया जाये। कोई भूल नहीं सकता है कि बस्तीवादी हुक्मरानों ने हमारे देशभक्तों और शहीदों को आतंकवादी कहकर उन्हें फांसी पर लटकाया था। ठीक वैसे ही हिन्दोस्तान के आज के हुक्मरान उन सभी को आतंकवादी बता रहे हैं, जो अपने हकों की मांग कर रहे हैं और अपने हकों के लिये लड़ रहे हैं। अपने हक मांगने वालों को "कट्टरवादी", "पिछड़ा", "उग्रवादी", "अलगाववादी" भी कहा जा रहा है।

हिन्दोस्तान के बड़े सरमायदार अपने साम्राज्यवादी मंसूबों को पूरा करने के लिये हिन्दोस्तानी राज्य को हर तरीके से और फाशीवादी बना रहे हैं। सभी प्रकार के राजनीतिक प्रतिवाद को मनमानी से दबाया जाता है। हुक्मरान जिस भी संगठन को चाहे, वे उसे पोटा के तहत बैन कर देते हैं, और जिस भी व्यक्ति को चाहे गिरफ्तार कर लेते हैं। यह आज अपने आप को "दुनिया का सबसे बड़ा लोकतंत्र" कहलाने

वाले देश में आम बात हो गई है। राज्य द्वारा साम्प्रदायिक हिंसा आयोजित किया जाना, राजनीतिक कार्यकर्ताओं का कत्लेआम करवाना, बम विस्फोट करवाना, दूसरे तरीके से लोगों के बीच आतंक फैलाना, यह सब आज हमारे देश में राज चलाने के आम तरीके बन गये हैं।

साम्राज्यवादियों और सरमायदार राज्यों की बेहद गुनहगार और फाशीवादी हरकतों पर पर्दा डालने और उन्हें सही ठहराने के लिये यह कहा जा रहा है कि जिस भी राज्य में "स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव" करवाये जायें, वह राज्य सभ्य और लोकतांत्रिक है। पर साम्राज्यवादियों और सरमायदारों द्वारा आयोजित "स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव" का असली लोकतंत्र से कोई मतलब नहीं है। ये चुनाव तो सिर्फ सरमायदारों के आपसी मतभेदों को हल करने और उनके दलालों को राजगद्दी पर बिठाने के तरीके ही हैं। लेकिन आजकल राजनीतिक संकट इतना गहरा हो गया है और सरमायदारों के आपसी मतभेद इतने तेज़ हो गये हैं, कि हुक्मरान चुनावों के जरिये भी इन्हें हल नहीं कर पा रहे हैं, जैसे कि उत्तर प्रदेश व कश्मीर के चुनावों से नज़र आता है।

पाकिस्तान में और जम्मू–कश्मीर में अभी हाल में जो चुनाव हुये, उनसे तनाव और जंग का खतरा खत्म नहीं हुआ है। न ही कश्मीर की समस्या का कोई हल हुआ है। न ही हिन्दोस्तान और पाकिस्तान की सरकारों के बीच, एक दूसरे के खिलाफ़ साम्प्रदायिक और शोवींवादी प्रचार रुका है। हिंद–पाक सीमा से हालांकि फिर से फौज को हटाया जा रहा है, पर यह सिर्फ कुछ समय के लिये ही है। असलियत में यहां अमरीकी साम्राज्यवादी रणनीति के अनुसार सब कुछ किया जा रहा है और हिन्दोस्तान–पाकिस्तान, दोनों राज्य इस रणनीति में पूरी तरह शामिल हैं।

दुनिया भर में, सरमायदारी राज्यों और उनकी बहुपार्टी लोकतंत्र प्रणाली पर लोगों का भरोसा काफी हद तक घट गया है। सभी बातों से यह स्पष्ट होता जा रहा है कि ये राज्य पूरे समाज पर मुट्ठीभर शोषकों की हुकूमत को थोपने के साधन मात्र हैं। तमाम जनसमुदाय के अधिकारों पर बेरहमी से हमला किया जा रहा है। साम्राज्यवाद का अजेंडा भी साफ नज़र आ रहा है – फाशीवाद लागू करना और दुनिया को फिर से बांटकर उन पर कब्ज़ा करने के लिये जंग छेड़ना।

जब–जब "मुक्त बाज़ार सुधारों" के खिलाफ़ जनता का विरोध बढ़ता रहा है, तब–तब साम्राज्यवादी और सरमायदार यह दावा करते हैं कि सुधार कार्यक्रम के साथ एक "मानवीय चेहरा" जोड़ना जरूरी है। जब–जब "मानवीय चेहरा" की चाल का पर्दाफाश होता रहा है, इस पर लोगों का विश्वास घटता गया है, तब यही सरमायदार और साम्राज्यवादी उल्टा कहने लगते हैं कि यह "मानवीय चेहरा" ही सारी आर्थिक समस्याओं की वजह है। वे मांग रखते हैं कि "मानवीय चेहरे" को खत्म कर देना चाहिये। पूंजीवादी सुधार और बहुपार्टी लोकतंत्र, चाहे "मानवीय चेहरे" के साथ हो या बगैर हो, आज साफ–साफ यह दिखता है कि यह बड़े इजारेदार पूंजीपतियों का, पूरे समाज पर हावी होने का साधन ही है। और यही बड़े इजारेदार पूंजीपति अपनी हुकूमत को कहीं बैलट से थोप रहे हैं तो कहीं बुलेट से।

1991 में बहुत शोर मचाया गया था कि अब आर्थिक विकास, शान्ति और लोकतंत्र का विस्तार होगा। उस समय सोवियत संघ के पतन और विघटन के साथ शीत युद्ध खत्म हुई। सभी यूरोपीय ताकतों ने, साथ–साथ अमरीका और कनाडा ने यह ऐलान कर दिया था कि सभी देशों के लोगों को "मुक्त बाज़ार के सुधारों" और "बहुत सारी पार्टियों के नुमायंदों वाले लोकतंत्र" का रास्ता ही अपनाना पड़ेगा। यह ऐलान किया गया कि अब "उदारता का युग" वापस आने वाला है। यह कहा गया कि कम्युनिज़्म खत्म हो गया है। साम्राज्यवादियों ने यह दावा किया कि अब पूंजीवाद की आपसी होड़ की ताकतें समाज का संकट दूर करेंगी और प्रगति का द्वार खोलेंगी। इन सारे शानदार दावों के किये जाने के बाद, एक दशक बीत चुका है और आज दुनिया के पूंजीवाद की असली सूरत सबके सामने स्पष्ट है। आज यह स्पष्ट है कि पूंजीवाद ही देश में फाशीवाद और विदेश में हमले और प्रतिक्रियावादी जंग की प्रेरक शक्ति है। साम्प्रदायिकता, नस्लवाद, आतंकवाद, जनता की रोजी–रोटी और हकों पर हमले–इन सबके पीछे पूंजीवाद ही है।

मार्क्सवाद–लेनिनवाद हमें सिखाता है कि साम्राज्यवाद का मतलब है दूसरे देशों पर कब्ज़ा करने और दुनिया को फिर से बांटने के लिये जंग छेड़ना। अमरीकी साम्राज्यवाद एशिया पर कब्ज़ा करने के लिये रौब जमाने वाली रणनीति अपना रहा है। उसके तहत वह खुलेआम हमले भी कर रहा है, गुप्त साजिशें भी, और "शान्ति लाने" और "शान्ति बनाये

रखने" की हरकतें भी कर रहा है। पर यह सब एक ही मकसद के लिये किया जा रहा है, कि कैसे इस इलाके पर अमरीकी साम्राज्यवादी हावी हो सकें। इस इलाके के देशों पर कब्जा करने, इन पर अपने पैर जमाने और इन्हें आपस में बांटने के इस साम्राज्यवादी खेल में कभी समझौते किये जा रहे हैं तो कभी होड़ लगाये जा रहे हैं। इस खेल में हिन्दोस्तान और पाकिस्तान, दोनों राज्य पूरा–पूरा शामिल हैं। हिन्दोस्तान और पाकिस्तान ज्यादा से ज्यादा हथियारों से अपने आप को लैस करते जा रहे हैं। ये शान्ति के लिये नहीं किया जा रहा है, सिर्फ अपनी–अपनी रक्षा के लिये भी नहीं, बल्कि हमलावर जंग लड़ने और साम्राज्यवादी होड़ में हिस्सा लेने के लिये। इसलिये चौकन्ने रहना बहुत जरूरी है। क्षण भर के लिये भी यह वहम नहीं होना चाहिये कि दक्षिण एशिया के ऊपर से जंग के बादल हट गये हैं।

मार्क्सवाद–लेनिनवाद हमें यह भी सिखाता है कि साम्राज्यवादी सरमायदार फाशीवाद का रास्ता अपनाता है जब उसे अपनी हुकूमत को उदारवाद तथा सोशल डेमोक्रेसी के जरिये बरकरार रखने में मुसीबत होती है। वह खुली व बेलगाम हिंसा के जरिये अपने आधिपत्य को बरकरार रखने का प्रयास करता है। वह अपने विरोधियों का दमन करने के लिये हर बर्बर तरीके अपनाता है, जैसे नस्लवाद, सांप्रदायिकता तथा राजकीय आतंकवाद। यही आज अमरीका, ब्रिटेन, कनाडा, हिन्दोस्तान तथा समूचे दुनिया भर में हो रहा है।

साथियों,

15 अगस्त 2002 को, हिन्दोस्तान की आजादी की 55वीं सालगिरह पर, प्रधान मंत्री वाजपयी ने हिन्दोस्तान की जनता को आह्वान दिया कि हिन्दोस्तानी राज्य की "धर्मनिरपेक्ष बुनियादों" की हिफ़ाज़त करें और "भड़काने की कोशिशों" के बावजूद "सहनशीलता" दिखायें। दूसरे शब्दों में प्रधान मंत्री का कहना था कि गुजरात के साम्प्रदायिक हत्याकांड के शिकार बने लोगों ने खुद ही "भड़काने की कोशिश" की थी, कि उनकी यह गलती थी कि वे "भड़क" गये थे। प्रधानमंत्री ने हिन्दोस्तानी राज्य का गुणगान किया, कि हिन्दोस्तानी राज्य सहनशीलता दिखा रहा है और सच्ची धर्मनिरपेक्षता की हिफ़ाज़त कर रहा है। यह सरासर झूठ है। हाल में, 25 अक्तूबर को वाजपयी जी ने घोषणा की कि गुजरात में जो कुछ हुआ, वह दुबारा नहीं होगा।

अप्रत्यक्ष रूप से प्रधानमंत्री यह मान रहे हैं कि गुजरात के नरसंहार को हुक्मरान वर्ग ने, अपने राज्य के जरिये, आयोजित किया था।

अटल बिहारी वाजपयी ऐसा करने और कहने वाले पहला प्रधान मंत्री नहीं है। इससे पहले भी, जब–जब हुक्मरान अपने साम्प्रदायिक पापों के लिये रंगे हाथ पकड़े गये हैं, तब–तब उन्होंने "सहनशीलता" और "सद्भावना" का प्रचार किया है। न ही वाजपयी जी पहला ऐसा प्रधानमंत्री है जिसने वह झूठा वादा किया कि "ऐसा दुबारा नहीं होगा"। जब बर्तानवी बस्तीवादियों ने देश के बंटवारे के समय खून–खराबा करवाया था और "देशी साहबों" ने भी उस अपराध में अपना हाथ बांटा था, तो जवाहरलाल नेहरू ने सहनशीलता और सद्भावना का प्रचार किया था। नेहरू ने भी वादा किया था कि ऐसा खून–खराबा दुबारा नहीं होगा। इंदिरा गांधी ने पहले एमरजैंसी का ऐलान किया, अपने मुख्य राजनीतिक विपक्षियों को जेल में बंद कर दिया और फिर हिन्दोस्तान के संविधान के पूर्वकथन में "धर्मनिरपेक्ष" शब्द जोड़ दिया। इंदिरा गांधी ने सिक्खों को साम्प्रदायिक ढंग से तड़पाया और आपरेशन ब्लूस्टार के तहत अमृतसर के स्वर्ण मंदिर पर फौजी हमला करवाया। राजीव गांधी ने कानूनों को बदल कर सभी राजनीतिक पार्टियों के लिये यह लाज़िमी बना दिया कि वे हिन्दोस्तानी राज्य की "धर्मनिरपेक्ष बुनियादों" की हिफ़ाज़त करने की कसम खायें। और यह तब किया गया जब इससे ठीक पहले, नवंबर 1984 में, राजीव गांधी और कांग्रेस पार्टी ने सिक्ख धर्म के लोगों का भयानक कत्लेआम करवाया था और फिर "हिन्दू, हिंदी, हिन्दोस्तान" के नारे के साथ चुनाव जीता था। दिसंबर 1992 में नरसिंह राव सरकार और मुख्य विपक्ष की पार्टी भाजपा की मिलीभगत के साथ, बाबरी मस्जिद तोड़ा गया और बड़े पैमाने पर साम्प्रदायिक कत्लेआम करवाया गया था।

अगर हम हिन्दोस्तान के मजदूर–मेहनतकशों के पिछले 55 सालों के पूरे अनुभव को ध्यान से देखें, तो यह साफ दिखता है कि साम्प्रदायिकता और धर्मनिरपेक्षता एक ही "बांटो और राज करो" की रणनीति के दो अलग चेहरे हैं। यह भी साफ दिखता है कि आज जनता को बांटकर राज करने की हिन्दोस्तानी सरमायदारों की इस रणनीति के दो हथकंडे कांग्रेस पार्टी और भाजपा हैं।

भाजपा और कांग्रेस पार्टी हिन्दोस्तानी सरमायदारों की दो मुख्य पार्टियां हैं। इन्हें बड़े सरमायदारों और दुनिया के सबसे बड़े साम्राज्यवादियों से धन और समर्थन मिलता है। ये दोनों आपस में होड़ लगा रही हैं कि कौन हिन्दोस्तान के सरमायदारों के "मुक्त बाज़ार सुधारों" और साम्राज्यवादी मंसूबों की ज्यादा अच्छी तरह देखरेख करेगी। ये दोनों अपने–अपने वोट बैंक बढ़ाने के लिये साम्प्रदायिकता और साम्प्रदायिक हिंसा का इस्तेमाल करती हैं। ये दोनों शोषित–पीड़ित जनता के संघर्षों को खून में बहाने के लिये राजकीय आतंकवाद का इस्तेमाल करती हैं। और ये दोनों ही धर्मनिरपेक्षता के मंच का भी इस्तेमाल करती हैं और यह प्रचार करती हैं कि सिर्फ हिन्दोस्तानी राज्य ही "साम्प्रदायिक सद्भावना" बनाये रख सकता है, जैसा कि वाजपयी ने इस साल 15 अगस्त को किया।

भाजपा कांग्रेस पार्टी की आलोचना करती है, कहती है कि वह धर्मनिरपेक्षता के नाम पर "अल्पसंख्यकों को खुश" कर रही है। कांग्रेस पार्टी भाजपा की आलोचना करती है, कहती है कि वह धर्मनिरपेक्षता के असूलों का हनन् कर रही है और हिन्दोस्तानी राज्य की "धर्मनिरपेक्ष बुनियादों" को नष्ट कर रही है। पर जो भी सत्ता में बैठती है, वही साम्प्रदायिकता और गुंडागर्दी पूरे राज्य तंत्र में, तथा पुलिस और अर्धसैनिक बलों में, घोल देती है। सत्ता में बैठकर इन्होंने न जाने कितनी बार पुलिस और अर्धसैनिक बलों को साम्प्रदायिक खून–खराबा करवाने का आदेश दिया है, नवंबर 1984 में, दिसंबर 1992–जनवरी 1993 में, मार्च 2002 में, आदि। और हरेक भयानक हत्याकांड करवाने के बाद, इन दोनों ने "सहनशीलता" और "साम्प्रदायिक सद्भावना" का प्रचार किया है।

सभी तथ्यों से यही निकलता है कि साम्प्रदायिकता और साम्प्रदायिक हिंसा हिन्दोस्तानी सरमायदारों द्वारा पूरे समाज पर किये जा रहे हमलों का एक हिस्सा है। यही दिखता है कि हिन्दोस्तानी राज्य, उसका संविधान, उसकी अनेक पार्टियों के नुमायंदों वाले लोकतंत्र की राजनीतिक प्रक्रिया, उसकी अफसरशाही, फौज और पुलिस पूरी तरह साम्प्रदायिक है। लेकिन हिन्दोस्तान के कम्युनिस्ट आन्दोलन में एक बड़ा सा दल है जो मजदूर–किसान को इस नतीजे पर पहुंचने से रोक रहा है।

कम्युनिस्ट आंदोलन के अंदर ऐसे लोग हैं जो, जब भी सांप्रदायिक कत्लेआम होता है, हिन्दोस्तानी राज्य को निर्दोष ठहराते हैं। ऐसे कम्युनिस्ट समस्या के लिये इस या उस पार्टी को दोषी ठहराते हैं। ऐसा कहने वालों के अनुसार, हिन्दोस्तानी राज्य में कोई बुराई नहीं है। यानि जिस पूंजीवादी व्यवस्था की यह राज्य हिफ़ाज़त करता है, और जिन चुनावी तथा दमनकारी तरीकों से उसकी हिफाज़त करता है, उनमें कोई बुराई नहीं है। इन लोगों के अनुसार, इस समय बुराई बस इतनी ही है कि भाजपा जैसी "साम्प्रदायिक–फाशीवादी" पार्टी केन्द्रीय सरकार को चला रही है। ऐसे कम्युनिस्ट मजदूरों–किसानों से यह भी कहते हैं कि इन "साम्प्रदायिक–फाशीवादी" ताकतों से मौजूदे हिन्दोस्तानी राज्य को बचाना चाहिये।

उनका यह कहना है कि भाजपा की तुलना में कांग्रेस पार्टी "कम बुरी" है। समस्या को हल करने का उनका प्रस्ताव यह है कि "साम्प्रदायिक–फाशीवादी" भाजपा–मोर्चे को बदलकर "धर्मनिरपेक्ष" कांग्रेस–मोर्चे को या किसी और गैर–भाजपा मोर्चे को सत्ता में लाया जाये। परन्तु 1947 से आज तक, हिन्दोस्तान के मजदूर–किसान का अनुभव यही दिखाता है कि सत्ता में बैठे दलों के चेहरे बेशक बदल भी जायें, पर साम्प्रदायिक हिंसा की समस्या, जातिवादी भेदभाव की समस्या, और इंसान का अत्याचार व बेइज़्ज़ती करने वाले दूसरे कारनामे नहीं रुके हैं।

"कम बुराई" को चुनने के रास्ते की हिमायत करने वाले ऐसे कम्युनिस्ट मजदूर–किसान पर सरमायदारों की सोच को थोपना चाहते हैं। सरमायदार यह सोच फैला रहे हैं कि मजदूर–किसान खुद अपनी हुकूमत न तो बना सकते हैं न ही चला सकते हैं। पर सवाल यह है कि मजदूर–किसान सिर्फ अलग–अलग बुराइयों के बीच चुनने तक ही सीमित क्यों रहें? हम मजदूर–किसान संगठित होकर इस बुराई को, सरमायदारों की हुकूमत को क्यों न खत्म कर डालें? सर्वहारा क्रांति के जरिये हमारी खुद की हुकूमत, यानि मजदूरों और किसानों का लोकशाही अधिनायकत्व स्थापित करने के लिये क्यों न हम काम करें? मजदूर आंदोलन के सामने आज यही ज्वलंत सवाल है।

साथियों,

अक्तूबर 1998 में अपनी पार्टी, हिन्दोस्तान की कम्युनिस्ट ग़दर पार्टी की दूसरी कांग्रेस हुई थी। उसमें हम इस समझ पर पहुंचे थे कि हिन्दोस्तान और दुनिया के हालातों को देखकर ऐसा लगता है कि आगे बड़ी–बड़ी तूफानें आने वाली हैं। लेनिनवाद हमें यह सिखाता है कि यह साम्राज्यवाद और सर्वहारा इंकलाब का युग है। इंकलाब का पीछे हटना कुछ थोड़े समय की ही बात है क्योंकि इतिहास हमारे पक्ष में है। इतिहास मजदूर वर्ग और इंकलाब के पक्ष में है। इस समय यह साफ नज़र आ रहा है कि दुनिया भर में सभी मुख्य अंतर्विरोध तेज हो रहे हैं। इससे लगता है कि एक तूफान फिर से आने वाली है। मगर लेनिनवाद हमें यह भी सिखाता है कि तूफान, बेशक वह कितना ही इंकलाबी क्यों न हो, उससे इंकलाब की जीत हो भी सकती है और नहीं भी। इंकलाब की जीत मजदूर वर्ग और उसकी अगुवा पार्टी की जागरुकता और तैयारी पर निर्भर है।

हिन्दोस्तान में दसों–हजारों मजदूर अब समझने लगे हैं कि जहां तक पूंजीवाद और पूंजीवादी सुधारों के खिलाफ़ संघर्ष करने का सवाल है, उसमें वोट डालने का हक किसी काम का नहीं है। निजीकरण के खिलाफ़ और मजदूरों के हकों की हिफ़ाज़त में मजदूरों की एकता बहुत बढ़ गई है। अलग–अलग पार्टियों को मानने वाले मजदूर एक साथ मिलकर लड़ रहे हैं। तमाम किसान और किसान संगठन विदेशी पूंजी के प्रवेश और डब्ल्यू•टी•ओ• के दबावों के खिलाफ़ आवाज उठा रहे हैं। इस अवधि के दौरान, जो तीनों मुख्य संसदीय गठबंधन सत्ता में रहे हैं–भाजपा मोर्चा, कांग्रेस मोर्चा और तीसरा मोर्चा–इन तीनों के साथ जनता का जो अनुभव रहा है, इस अनुभव से यह स्पष्ट हुआ है कि इन तीनों के पीछे सरमायदार वर्ग का ही हित है और इन तीनों का एक ही कार्यक्रम है, कि कैसे बड़े सरमायदारों को और अमीर बनाया जाये।

गुजरात में हुक्मरानों द्वारा जो भयानक साम्प्रदायिक कत्लेआम आयोजित करवाया गया, उसके बाद समाज के सभी तबकों के लोग अब साफ–साफ समझ रहे हैं कि हिन्दोस्तानी राज्य जनता को सुरक्षा दिलाने के बजाय, खुद ही जनता की जिंदगी और समाज की सुरक्षा के लिये सबसे बड़ा खतरा बन गया है। लोगों को उनके हक दिलाने

के बजाय, यह राज्य खुद लोगों के हकों का हनन् करता है और कातिलों और गुनहगारों को रक्षा देता है।

हिन्दोस्तानी मजदूर वर्ग संघर्ष कर रहा है और सभी लड़ाकू ताकतों के साथ एकता बनाने की कोशिश कर रहा है। अपनी जिंदगी के अनुभवों से ही मजदूर वर्ग की जागरुकता बढ़ रही है। परन्तु उसे सही नतीजे पर पहुंचने और अपने वर्ग के लक्ष्यों के खातिर लड़ने के लिये संगठित होने से रोका जा रहा है। मजदूर वर्ग को खुद एक आजाद राजनीतिक बल बतौर उभरने से रोका जा रहा है। उसे रोकने वाले कम्युनिस्ट आन्दोलन के अंदर वे दल हैं जो कहते हैं कि इस समय फौरी संघर्ष "धर्मनिरपेक्षता और साम्प्रदायिकता" के बीच है, कि हिन्दोस्तानी राज्य की "धर्मनिरपेक्ष बुनियादों" की हिफाज़त करनी चाहिये।

अगर हिन्दोस्तानी राज्य की बुनियाद साम्प्रदायिक नहीं है तो बार–बार साम्प्रदायिक हिंसा क्यों होती है? क्या हिन्दोस्तानी लोग साम्प्रदायिक और पिछड़े हैं? अगर यह कहा जाता है कि हिन्दोस्तानी राज्य धर्मनिरपेक्ष और साम्प्रदायिकता विरोधी है तो हम इसी नतीजे पर पहुंचेंगे कि लोग पिछड़े सोच के हैं, धर्म के आधार पर बंटे हुये हैं। फिर हमें यह कहना होगा कि "शान्ति और साम्प्रदायिक सद्भावना" कायम करने के लिये हिन्दोस्तानी राज्य पर निर्भर होना होगा। इस तरह का तर्क पेश करके ऐसे कम्युनिस्ट, जो कहते हैं कि हिन्दोस्तानी राज्य की धर्मनिरपेक्ष बुनियादों की हिफ़ाज़त करनी चाहिये, वे उसी झूठ को दोहरा रहे हैं जो हिन्दोस्तान के बस्तीवादी हाकिमों ने फैलाया था। वे उसी झूठ को दोहरा रहे हैं, जिसे गद्दार सरमायदार वर्ग इतने सालों से फैला रहा है।

मजदूर वर्ग आन्दोलन की कमजोरी और उसमें बंटवारे की वजह से दक्षिण एशिया में फाशीवाद और जंग का खतरा बढ़ रहा है। इसलिये यह बेहद जरूरी हो गया है कि हिन्दोस्तान के कम्युनिस्ट धर्मनिरपेक्षता और साम्प्रदायिकता के बारे में, उनकी शुरुआत और असली स्रोत के बारे में जो गलत सोच फैलाये जा रहे हैं, उन्हें दूर करें। "धर्मनिरपेक्षता और साम्प्रदायिकता के बीच मुख्य संघर्ष" इस लाइन के असर का डटकर मुकाबला करना और उसे हराना बेहद जरूरी बन गया है ताकि मजदूर वर्ग अपनी क्रांतिकारी भूमिका को अदा कर सकता है।

साथियों,

धर्मनिरपेक्षीकरण का मतलब है सामाजिक और राजनीतिक मामलों से धर्म की प्रधानता के असर को क्रम–क्रम से दूर करना। हमारे समाज में धर्म की प्रधानता के खिलाफ, पिछड़े रिवाजों और कट्टर ब्राह्मणवादी जाति प्रथा के खिलाफ संघर्ष का लंबा इतिहास रहा है। 15वीं और 16वीं सदियों में हुयी भक्ति लहर और सूफी लहर के अनुभव भी इसमें शामिल हैं। हालांकि उनके विचार सतही तौर पर धार्मिक दिखते थे, परन्तु उनका अंदरूनी सार यही था कि हरेक व्यक्ति को अपने जमीर के अनुसार चलने का अधिकार होना चाहिये। कि ब्राह्मणवाद, मुल्लाहवाद या किसी प्रकार के धार्मिक कट्टरवाद की प्रधानता नहीं होनी चाहिये।

हमारे समाज के विकास में काफी पहले से ही यह राजनीतिक सिद्धान्त स्थापित किया गया था कि राज्य का फर्ज है समाज के सभी सदस्यों को सुख और रक्षा दिलाना, तभी उस राज्य का अधिकार माना जायेगा। पर जब जाति प्रथा को समाज में स्थापित कर दिया गया और यह प्रथा समाज में वर्ग भेदभाव बरकरार रखने का आधार बन गई, तब सुख और रक्षा की परिभाषा ही बदल गई। तथाकथित निम्न जाति के परिवार में जन्म लिये व्यक्ति के लिये सुख का मतलब बना सिर्फ अपने जात के काम को करने का मौका। जब तक उसे तथाकथित ऊंचे जात के लोगों की सेवा करने का मौका मिलता, उसे सुखी माना जाता। समाज में जाति प्रथा को बनाये रखना राज्य का मुख्य काम बन गया। यानि, समाज दो हिस्सों में बंट गया, एक हिस्से में वे लोग जिनके सारे अधिकार थे, और दूसरे हिस्से में वे लोग जिनके सिर्फ फर्ज थे पर कोई अधिकार नहीं। ऐसी व्यवस्था, जिसमें इंसानों के अधिकारों को नकारा जाता था, जिसमें हरेक व्यक्ति के अपने ज़मीर के अनुसार चलने का अधिकार नकारा जाता था, ऐसी व्यवस्था के खिलाफ भक्तों और सूफियों ने बग़ावत की थी।

18वीं और 19वीं सदी में यूरोप में समाज के धर्मनिरपेक्षीकरण का जो संघर्ष चला था, उसकी अगुवाई सरमायदार वर्ग ने की थी। उस समय सरमायदार वर्ग एक प्रगतिशील वर्ग था, जो सामंतवादी और धार्मिक प्रधानता के खिलाफ लड़ रहा था। उस समय की प्रगतिशील ताकतों ने राज्य के मामलों से धर्म और चर्च की प्रधानता और असर को दूर करने के लिये संघर्ष किया था। उन्होंने यह मांग की थी कि समाज में कानून

बनाने का आधार ज्ञान और विज्ञान होना चाहिये। वह संघर्ष सामंतवादी प्रधानता के खिलाफ़ सामाजिक क्रान्ति की विचारधारात्मक झलक था। जैसा कि मार्क्स और एंगेल्स ने समझाया है "18वीं सदी में फ्रांसीसी ज्ञान प्राप्ति, खास तौर पर फ्रांसीसी भौतिकवाद, सिर्फ मौजूदे राजनीतिक संस्थानों और मौजूदे धर्म और धार्मिक सोच के खिलाफ़ संघर्ष ही नहीं था, बल्कि 17वीं सदी की अभौतिकता और सभी अभौतिकता के खिलाफ खुलेआम संघर्ष भी था।" (द होली फैमिली)

परंतु सरमायदार यूरोप में भी ज्यादा देर तक प्रगतिशील नहीं रहे, और बस्तियों में तो बिल्कुल ही नहीं। 1825 से शुरू होकर, जब पूंजीवाद अत्यधिक उत्पादन के संकट में फंसा, तो धर्मनिरपेक्षीकरण के आंदोलन से जो प्रगतिशील विचार निकले थे, उन्हें सरमायदारों ने धर्मनिरपेक्षता के फलसफे में बदल दिया। धर्मनिरपेक्षता का यह फलसफा राजनीति में उदारवाद और धर्म में प्रोटेस्टेंटवाद के साथ–साथ चला। और जब 19वीं सदी के अंत में पूंजीवाद विकसित होकर अपना सबसे ऊंचा रूप, साम्राज्यवाद बन गया, तो सरमायदार यह ऐलान करने लगे कि धर्म राज्य का फर्ज बन गया है।

17वीं सदी में, इंग्लैंड में जब व्यापारियों और उत्पादकों तथा बड़े जमीन्दार घरानों के बीच समझौता हुआ था, उस समय के अंग्रेज सरमायदार के बारे में का• एंगेल्स ने यह लिखा किः "वह खुद धार्मिक था। उसका धर्म ही उसका मापदंड था जिसके अनुसार उसने राजा और जमीन्दार के खिलाफ़ संघर्ष किया था। उसे समझने में देर नहीं लगी कि कैसे इस धर्म का इस्तेमाल करके वह अपने नीचे के लोगों को दबा सकता है। और भगवान द्वारा बिठाये गये मालिकों का गुलाम बना सकता है यानि, अंग्रेज सरमायदार को अब "नीच लोगों", राष्ट्र के विशाल उत्पादक जनसमुदाय, को दबाने का काम करना पड़ा, और ऐसा करने में एक हथकंडा धर्म का असर था।" (सोशलिज़्म यूटोपियन एंड सायंटिफिक)।

बर्तानवी बस्तीवादियों ने हिन्दोस्तान पर अपनी हुकूमत बसाने के लिये, यहां जो भी कुछ प्रगतिशील था, उसे कुचल दिया। बर्तानवी बस्तीवादियों ने समाज की सबसे पिछड़ी ताकतों के साथ गले मिला लिया और ज्ञान प्राप्त करने के सारे रास्ते बंद कर दिये। बर्तानवियों ने जेंटू कोड को लागू किया, जिसके तहत घिनावनी जाति प्रथा और

उन सारे पिछड़े रिवाजों को समाज में वैधानिकता दी गई, जिनके खिलाफ लोग लड़ रहे थे। मिसाल के तौर पर, जेंटू कोड ने सती प्रथा को उचित ठहराया। जेंटू कोड में कहा गया कि "यह औरत के लिये उचित है कि वह अपने पति की मौत के बाद आग में उसके शव के साथ खुद भी जल जाये। जो औरत खुद इस तरह जल जाती है, वह सौभाग्य से 3 करोड़ 50 लाख सालों तक स्वर्ग में अपने पति के साथ रहेगी"। यह सब "स्वदेशी रिवाजों" को "बर्दाश्त करने" के बहाने किया गया।

1857 में आजादी के पहले जंग में इस उपमहाद्वीप के लोगों की सबसे अच्छी परंपरायें देखने में आयीं। देश भर से लोग, सभी धर्मों के लोग मिलकर एक लक्ष्य के लिये लड़े, बस्तीवादी हुकूमत से पूरी तरह आजाद होने के लिये लड़े। वह पूरी जनसमुदाय की बग़ावत थी, जिसने बस्तीवादी हुकूमत की नींव को हिला दिया।

बर्तानवी बस्तीवादी सरमायदारों ने अपनी अगुवा फौजी ताकत का इस्तेमाल करके बड़ी बेहरमी से जनता की इस बग़ावत को कुचल दिया। उसके बाद बर्तानवी बस्तीवादी सरमायदारों ने बड़े सुनियोजित ढंग से सांप्रदायिक बंटवारे और सांप्रदायिक हिंसा को यहां के समाज में स्थापित कर दिया। हिन्दोस्तान पर जो बस्तीवादी हुकूमत कायम की गई थी, उसकी बुनियाद यही थी। बस्तीवादी राज्य ने तरह–तरह के सांप्रदायिक दलों व नेताओं को पूरी रक्षा और समर्थन दिया। इस या उस धर्म के खिलाफ अपना जहर उगलने और नफ़रत फैलाने की उन्हें पूरी छूट दी। बस्तीवादी राज्य की पुलिस का अफवाह फैलाने और सांप्रदायिक हिंसा आयोजित करने में सीधा हाथ था। पर साथ ही साथ, ऐसा दिखावा किया गया जैसे कि हिन्दोस्तान में सांप्रदायिक सद्भावना बनाये रखने और धर्मनिरपेक्षता की हिफ़ाजत करने के लिये बस्तीवादी राज्य की जरूरत है। इस तरह, बर्तानवी बस्तीवादियों ने अलग–अलग तरीकों से हमला करके हमारी जनता को गुलाम बनाये रखा।

बर्तानवी बस्तीवाद ने यह झूठी सोच फैलाई कि हिन्दोस्तान में कोई राष्ट्र या राष्ट्रीयतायें नहीं हैं, सिर्फ धार्मिक सम्प्रदाय हैं। हिन्दोस्तान की जनता को बर्तानवी बस्तीवादी हुक्मरानों की मन–मर्जी से "हिन्दू बहुसंख्या" और कई धार्मिक अल्पसंख्यकों में बांट दिया गया। इन धार्मिक अल्पसंख्यकों में मुसलमान, सिख, ईसाई, आदि को शामिल

किया गया। यह बताया गया कि लोग पिछड़े हैं, एक दूसरे का कत्ल करते रहते हैं, कि ये "देशी" लोग तभी शांति से रह सकते हैं अगर अंग्रेजी शिक्षा पाये हुये उदारवादी लोग उन पर राज करते हैं, और साम्प्रदायिक सद्भावना बनाये रखते हैं और "सहनशीलता" का प्रचार करते हैं। यानि, पिछड़े, साम्प्रदायिक तौर पर बंटे हुये हिन्दोस्तान में कानून–व्यवस्था बनाए रखना "गोरे चमड़े वाले आदमी का बोझ" है। इस इरादे और इस कार्यक्रम के साथ, बर्तानवी बस्तीवादियों ने धर्मनिरपेक्षता का मंत्र जपते–जपते, साम्प्रदायिक हिंसा आयोजित किया और इस उपमहाद्वीप के लोगों को गुलाम बनाया।

बर्तानवी बस्तीवादियों ने हिन्दोस्तानी राज्य की नींव डाली थी। 1947 में जब हिन्दोस्तान के सरमायदार सत्ता में आये, तो उन्होंने इस नींव को बरकरार रखा। ये नींव साम्प्रदायिक थे। शुरू में ही यह परिभाषा दी गई थी कि हिन्दोस्तानी जनसमुदाय बहुसंख्या और अल्पसंख्या के धार्मिक सम्प्रदायों का बना हुआ है। 1950 में जब हिन्दोस्तानी गणराज्य के संविधान को अपनाया गया था, तो उस संविधान को बनाने वाली संविधान सभा का ही चुनाव साम्प्रदायिक निर्वाचन क्षेत्रों के आधार पर किया गया था, और यह चुनाव बर्तानवी बस्तीवादियों की देखरेख में किया गया था।

हिन्दोस्तानी सरमायदारों की मुख्य पार्टियां, भाजपा और कांग्रेस पार्टी, उन्हीं बस्तीवादी तरीकों और बस्तीवादी सोच के साथ काम करती हैं। वे साम्प्रदायिकता और धर्मनिरपेक्षता के उन्हीं तरीकों का इस्तेमाल करके लोगों को बांटती हैं। यह समझा जा सकता है कि भाजपा और कांग्रेस पार्टी बर्तानवी बस्तीवादियों के दिखाये गये रास्ते पर चल रही हैं। यह स्वाभाविक है क्योंकि हिन्दोस्तान का सरमायदार वर्ग एक गद्दार वर्ग है, जो बस्तीवादियों की छत्रछाया में पला व विकसित हुआ, जो बस्तीवादियों के साथ समझौता करके सत्ता में आया। इस सरमायदार वर्ग ने उस समय से लेकर आज तक, बस्तीवादी विरासत को बनाये रखा है, बचा कर रखा है। पर यह समझना व मानना बहुत मुश्किल है, कि जो अपने आप को कम्युनिस्ट और मार्क्सवादी कहलाते हैं, जो लाल झंडा फहराते हैं और अपनी छाती पर हथौड़ा–दंतिया लगाकर घूमते हैं, वे भी बर्तानवी बस्तीवादी सरमायदारों के अजेंडा के अनुसार चल रहे हैं!

साथियों,

धर्मनिरपेक्षता की फ़लसफा के अनुसार चलने वाले लोग द्वंद्ववादी भौतिकवाद की सोच से हट रहे हैं। वे यह आदर्शवादी विचार फैला रहे हैं कि इंसानों की जिंदगी से धर्म के प्रभाव को मिटाने के लिये ज्ञान और विज्ञान ही काफी है। लेकिन मार्क्सवाद का विज्ञान यह साबित करता है कि धर्म के प्रभाव को मिटाने के लिये सामाजिक इंकलाब की जरूरत है। आज सिर्फ सर्वहारा इंकलाब ही समाज में शोषण–दमन की उन हालतों को खत्म कर सकता है, जिनके चलते हुये लोग धर्म, भगवान, खुदा, "अगली दुनिया", "अगला जन्म", आदि में विश्वास करने को मजबूर होते हैं। इस तरह, आज धर्मनिरपेक्षता पर चलने वाले मार्क्सवाद से पूरी तरह हट रहे हैं और इंकलाब की जरूरत को इंकार कर रहे हैं।

लेनिन ने इस बात पर जोर दिया था कि ".....किसी भी हालत में हमें यह गलती नहीं करनी चाहिये, धर्म के सवाल को अलग से, आदर्शवादी तरीके से, "बुद्धिजीवी" सोच के सवाल के रूप में, वर्ग संघर्ष से अलग करके नहीं उठाना चाहिये, जैसा कि सरमायदार के बीच में से कुछ कट्टर–लोकतंत्रवादी अक्सर करते हैं। कोई बुद्धू ही ऐसा सोच सकता है कि ऐसे समाज में, जहां मेहनतकशों पर लगातार अत्याचार होता रहता है, वहां सिर्फ प्रचार करने से ही धार्मिक सोच–विचार दूर हो जायेंगे। यह सरमायदारों का तंग नज़रिया वाला सोच होगा, अगर हम यह भूल जायें कि धर्म का बोझ, जो मानवजाति पर इतना भारी पड़ता है, वह समाज में आर्थिक बोझ की पैदाइश और झलक ही है। चाहे हम कितने भी पर्चे बांटे या प्रचार करें, सर्वहारा को यह ज्ञान नहीं दिला सकते, जब तक सर्वहारा खुद पूंजीवादी शोषण के खिलाफ अपने संघर्ष से यह ज्ञान नहीं पाता। धरती पर स्वर्ग बनाने के लिये शोषित–पीड़ित वर्ग के इस इंकलाबी संघर्ष में एकता हमारे लिये ज्यादा महत्व रखता है, न कि किसी परलोक में स्वर्ग बनाने पर सर्वहारा मत की एकता"। (सोशलिज़्म एंड रिलिजन, लेनिन की रचनायें, ग्रंथ 10)

जो लोग यह कह रहे हैं कि धर्मनिरपेक्षता और साम्प्रदायिकता के बीच संघर्ष ही मजदूर–किसान का मुख्य और फौरी संघर्ष है, वे ठीक वही गलती कर रहे हैं जिसका जिक्र लेनिन ने किया। धर्म के सवाल को

मजदूर वर्ग के संघर्ष से अलग करके, एक "बुद्धिजीवी" सोच के रूप में पेश करके, वे मजदूर वर्ग की राजनीतिक एकता का रास्ता रोक रहे हैं।

पूंजीवाद और हिन्दोस्तानी समाज में जो भी कुछ पिछड़ा है, साम्प्रदायिकता, मध्यकालीन सोच–रिवाज़, जाति प्रथा, आदि सब मजदूर–मेहनतकश के इंकलाबी संघर्ष के जरिये ही खत्म होगा। मजदूर–मेहनतकश के इस इंकलाबी संघर्ष के रास्ते में यह गलत सोच, कि हिन्दोस्तानी राज्य धर्मनिरपेक्ष है, एक रूकावट है। यह मजदूरों और शोषितों में यह भ्रम फैलाता है कि मजदूर–मेहनतकश साम्प्रदायिकता, जातिवादी शोषण, आदि से मुक्ति पाने के लिये हिन्दोस्तानी राज्य पर निर्भर हो सकते हैं।

यह साम्राज्यवादियों और सरमायदारों का कहना है कि मुख्य संघर्ष साम्प्रदायिकता और धर्मनिरपेक्षता के बीच है। पर इसी बात को दोहराकर, कम्युनिस्ट आंदोलन में वे लोग जो सरमायदार वर्ग से समझौता करना चाहते हैं, वे लड़ाकू ताकतों के बीच निराशा फैला रहे हैं। वे मजदूर–मेहनतकशों से कह रहे हैं कि खुद अपने ही अंदर साम्प्रदायिक तनाव की वजह को तलाशो, साम्प्रदायिकता की असली वजह, सरमायदारी हुकूमत और उसका साधन, हिन्दोस्तानी राज्य, उस पर ध्यान न दो।

पूंजीवाद और सरमायदारों के खिलाफ, सामाजिक परिवर्तन के लिये मजदूर–मेहनतकश–किसान जो संघर्ष कर रहे हैं, उसी का एक हिस्सा है साम्प्रदायिकता और साम्प्रदायिक हिंसा के खिलाफ संघर्ष। कम्युनिस्टों का काम है मजदूर–मेहनतकशों को यह बात समझाना, यह समझाना कि यह हुक्मरान सरमायदार ही है जो मजदूरों और सभी शोषित–पीड़ित लोगों के संघर्षों को खून में बहाने के इरादे से, साम्प्रदायिकता और साम्प्रदायिक हिंसा का इस्तेमाल करते हैं। वे जो मजदूर–किसान से कह रहे हैं कि हमें हिन्दोस्तानी राज्य की धर्मनिरपेक्ष बुनियादों की हिफाज़त करनी चाहिये, वे उल्टी दिशा में काम कर रहे हैं। साम्प्रदायिकता और साम्प्रदायिक हिंसा की असली जड़ कहां है, उसे समझने से वे मजदूर वर्ग को रोक रहे हैं।

साम्प्रदायिकता के खिलाफ संघर्ष को एक अलग संघर्ष बताकर, शोषण–दमन से मुक्ति के लिये संघर्ष से उसे अलग करके, धर्मनिरपेक्ष मोर्चे की हिमायत करने वाले, सर्वहारा के वर्ग संघर्ष में

रूकावट बन रहे हैं। वे सरमायदारों के हितों की हिफाज़त कर रहे हैं। साम्प्रदायिकता और साम्प्रदायिक हिंसा के खिलाफ लोगों का जो गुस्सा और विरोध है, उसे ये लोग भाजपा को सत्ता से हटाकर उसकी जगह पर कांग्रेस पार्टी को बिठाने के काम के लिये इस्तेमाल करना चाहते हैं, ताकि सरमायदारों की यही व्यवस्था और कार्यक्रम चलते रहें। मजदूर वर्ग आंदोलन को अपने स्वतंत्र कार्यक्रम, अपने खुद के इंकलाबी इरादों से इस तरह गुमराह करके, ये लोग साम्राज्यवाद और हिन्दोस्तान के सरमायदारों की रणनीति की ही हिमायत कर रहे हैं।

साथियों,

हिन्दोस्तानी राज्य सरमायदार वर्ग की हुकूमत का साधन है। यह कई संस्थानों का पेचीदा मेल है। इन संस्थानों के जरिये मजदूर वर्ग और दूसरे मेहनतकशों को दबाया जाता है, राजनीतिक सत्ता से दूर रखा जाता है। यह पूंजीवाद के विकास और हिन्दोस्तान की जमीन और श्रम की लूट–खसौट को मदद देने का साधन है। यह साम्प्रदायिकता, पितृसत्ता और सामंती संबंधों, मध्यकालीन और बेहद पिछड़े तरीके के अत्याचार, आदि को बरकरार रखने का साधन है। यह हिन्दोस्तानी समाज में साम्प्रदायिक और जातिवादी बंटवारे को बनाये रखने का मुख्य साधन है।

हिन्दोस्तान की इस केन्द्रित राज्य सत्ता की नींव बर्तानवी बस्तीवादियों ने डाली थी। वे हिन्दोस्तान पर कब्ज़ा करने और उसकी लूट–खसौट करने के अपने खुदगर्ज इरादों को हासिल करना चाहते थे। टाटा–बिरला जैसे बड़े पूंजीवादी घरानों की अगुवाई में हिन्दोस्तान का सरमायदार वर्ग और जमीन्दार वर्ग, इन दोनों को बस्तीवादियों ने पैदा किया। इस राज्य को 1947 में इन वर्गों के ही हाथों में सौंपा गया। समाज के इन गद्दार तबकों ने बस्तीवादी राज्य की नींव को बरकरार रखा। इस नींव के ऊपर इन्होंने नुमायंदों वाले लोकतंत्र की राजनीतिक प्रक्रिया की स्थापना की, जो कि बर्तानवी "वेस्टमिनस्टर मॉडल" की नकल ही थी। "शान्ति, सुव्यवस्था, अच्छी सरकार", ये जो यूरोपीय सरमायदारों के असूल और मूल्य थे, इन्हें ही आज़ाद हिन्दोस्तान में लोकतंत्र की कसौटी माना गया। 1950 में संविधान बनाकर, हिन्दोस्तान के सरमायदारों ने सभी प्रौढ़ पुरुषों और स्त्रियों को वोट

डालने का अधिकार दिया। पर साथ ही साथ, जाति और धर्म के आधार पर वोट डालने वालों का बंटवारा कायम रखा गया।

नुमायंदों वाले लोकतंत्र का मकसद है मेहनतकशों को सत्ता से बाहर रखना और सरमायदारों के अलग–अलग तबकों को आपस में राज्य सत्ता बांटने में योगदान देना। यह राजनीतिक प्रक्रिया यूरोप से लाये गये पुराने राजनीतिक सिद्धान्त पर आधारित है। इस राजनीतिक प्रक्रिया के जरिये पूरे हिन्दोस्तानी समाज पर एक शोषण करने वाले अल्पसंख्यक दल की मनमानी की हुकूमत को थोपा गया और जायज़ ठहराया गया। जनता के शोषण और लूट से प्राप्त धन का कितना हिस्सा किस को मिलेगा, उस पर शोषकों के बीच आपसी झगड़ों को भी हल करने का साधन यही राजनीतिक प्रक्रिया बनी।

रस्मी आज़ादी के बाद के 55 सालों का अनुभव यह दिखाता है कि चाहे नेहरू के "समाजवादी नमूने के समाज" के दौरान हो, या उदारीकरण–निजीकरण के जरिये वैश्वीकरण के आज के दौर में हो, हिन्दोस्तानी राज्य, उसकी नीतियों और पंच वर्षीय योजनाओं से फायदा सिर्फ सरमायदारों को ही हुआ है। उद्योग, कृषि और सेवा क्षेत्र में पूंजीवाद के विकास को और फैलाने के लिये ही राज्य ने हस्तक्षेप किया है। सरमायदार वर्ग के अंदर, बड़े इजारेदार पूंजीपतियों ने अपना असर और अपना अहम् स्थान बनाये रखा है और बढ़ाया है। साथ ही साथ, दुनिया की बहुराष्ट्रिक कंपनियों और वर्ल्ड बैंक, एशियन डेवेलपमेंट बैंक आदि जैसे अंतर्राष्ट्रीय वित्त संस्थानों ने भी अपना दबाव बढ़ाया है।

आज़ादी के बाद, पहले तीन दशकों में, हिन्दोस्तान के सरमायदारों ने आधुनिक उद्योग, इस्पात प्लांट, तेलशोधक कारखानों, आधुनिक फौज आदि के जरूरी ढांचे को बनाने के लिये हिन्दोस्तानी राज्य का इस्तेमाल किया। ऊंचे टैक्स, ड्यूटी आदि जारी किये गये ताकि हिन्दोस्तान के बाजार के अलग–अलग क्षेत्रों पर हिन्दोस्तानी सरमायदारों का ही बोलबाला बना रहे। पूरी जनता से भारी टैक्स वसूला गया, मुद्रास्फीति के जरिये जनता को लूटा गया। राजकीय क्षेत्र में "अर्थव्यवस्था की ऊंची से ऊंची चोटियों" तक पहुंचने के लिये जो पूंजीनिवेश जरूरी था, उसके लिये घरेलू बैंकों और वर्ल्ड बैंक जैसे साम्राज्यवादी संस्थानों से भारी उधार लिया गया। बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया गया और देहातों

में बैंकों को फैलाया गया। इन सारे तरीकों से पूरी आबादी की बचत के पैसे को इकट्ठा किया गया और उसे वित्त पूंजी के रूप में टाटा, बिरला जैसे इजारेदार घरानों को सौंप दिया गया।

सरमायदार इस इलाके में एक बड़ी औद्योगिक और फौजी ताकत बनना चाहते थे। उनके इस मंसूबे को पूरा करने के लिये जनता को खूब चूसा गया। और इसे जनता के सामने "समाजवादी नमूने का समाज" बताकर पेश किया गया। राज्य पर इजारेदार कंपनियां हावी हो गईं। इसलिये राजकीय क्षेत्र के विस्तार होने से आर्थिक ताकत का कुछ ही हाथों में सीमित रहना, यह कम नहीं हुआ, जैसा कि दावा किया गया था। बल्कि, इसके बजाय, राज्य की इजारेदारी से बड़े सरमायदार और बड़े हुये, अपने हाथों में और ज्यादा आर्थिक और राजनीतिक ताकत हासिल कर पाये।

पूंजीवाद के विकास से देश भर में अलग–अलग प्रान्तों के सरमायदार दल पनप रहे हैं। साथ ही साथ, बाज़ार और अर्थव्यवस्था पर हिन्दोस्तानी और अंतर्राष्ट्रीय वित्त पूंजी का बोलबाला बहुत बढ़ गया है। साम्राज्यवादियों का घुसना भी बढ़ गया है। बहुराष्ट्रिक कंपनियां कृषि उद्योग में, कृषि की जरूरी सामग्रियों में, तथा कृषि उत्पादों के बाजार में तेजी से घुस रही हैं। हिन्दोस्तानी राज्य, देशी और विदेशी पूंजी द्वारा इस मिली–जुली लूट की हिफाज़त करता है, इसमें मदद करता है। बेशक यह पहले से होता रहा है पर इतने सीधे और खुले रूप से नहीं। जबसे हिन्दोस्तान विश्व व्यापार संगठन में दाखिल हुआ है और निजीकरण–उदारीकरण के नुस्खों को अपना लिया है, तब से यह सब खुलेआम हो रहा है।

"समाजवादी नमूने का समाज" जनता को रोजी–रोटी की सुरक्षा नहीं दिला पाया। इस पर मेहनतकशों का गुस्सा जैसे–जैसे बढ़ता गया, वैसे–वैसे सरमायदारों ने कहना शुरु कर दिया कि "मुक्त बाज़ार के सुधारों" से यह समस्या हल हो जायेगी। सरमायदार यह दावा करते हैं कि इन सुधारों से इजारेदारी पर लगाम लगेगा और अर्थव्यवस्था में स्पर्धा बढ़ेगी। यह प्रचार 80 के दशक के बीच से और खास तौर पर 1991 से जोर–शोर से हो रहा है।

पिछले दस से ज्यादा सालों से, उदारीकरण–निजीकरण की नीतियों के साथ हमारा जो अनुभव रहा है, उससे यह साफ दिखता है कि इन

नीतियों का असली मकसद सबसे बड़ी इजारेदार कंपनियों और वित्त पूंजीपतियों के मुनाफे बढ़ाना है। चार दशकों तक इजारेदार पूंजीपतियों ने राज्य के पूंजीनिवेश का विस्तार करके और हिन्दोस्तानी बाज़ार को अपने लिये सुरक्षित रखकर, खूब मोटे पैसे कमाये। अब वे हिन्दोस्तान की जमीन और श्रम के शोषण और लूट को और बढ़ाकर, पहले से भी ज्यादा दौलत कमाना चाहते हैं। विदेशी बाजारों में हिन्दोस्तानी पूंजीनिवेश के बदले में उन्होंने देश के बाजार को विदेशी कंपनियों के लिये खोल दिया है। इजारेदार सरमायदार आधारभूत ढांचे के आधुनिकीकरण करने के लिये पूंजीनिवेश जुटाने के सस्ते स्रोतों की तलाश में हैं। इस तलाश में सरमायदारों ने विदेशी बैंकों और म्यूचुवेल फंड के लिये दरवाजे खोल दिये हैं। वे राज्य के उत्पादक संसाधनों को कौड़ियों के मोल खरीद रहे हैं। इसका अंजाम मेहनतकश जनता को भुगतना पड़ रहा है। वे ज्यादा से ज्यादा टैक्स वसूल कर मेहनतकशों को लूट रहे हैं। वे सार्वजनिक सामग्रियों और सेवाओं के लिये इजारेदार कंपनियों की ऊंची कीमत मांग रहे हैं, जैसे कि पानी, बिजली, शिक्षा, स्वास्थ्य सेवा, आदि के लिये।

किसी भी हालत में ज्यादा से ज्यादा मुनाफा दर हासिल करने की इजारेदार पूंजीपतियों की लालच और पूंजीवाद के आर्थिक संकट की वजह से हिन्दोस्तानी समाज में असुरक्षा बहुत फैल रही है। लाखों–लाखों किसानों और देहाती गरीबों को भुखमरी का शिकार बनाया जा रहा है, खुदकुशी करने को मजबूर किया जा रहा है। सिर्फ मेहनतकशों के लिये ही नहीं, जायदाद वाले वर्गों के कुछ तबकों में भी असुरक्षा बढ़ती जा रही है। जायदाद वाले वर्गों के उन सभी तबकों को अब इस व्यवस्था के अन्दर शामिल नहीं किया जा सकता है, जिन्हें पहले शामिल किया जाता था। इस तरह, सरमायदारों के आपस में सत्ता बांटने की जो अब तक व्यवस्था चल रही थी, वह भी आज घोर संकट में है।

राजनीतिक संकट की झलक सरकार के संकट में दिखती है। इन दिनों बड़ी तेजी से नयी–नयी गठबंधन सरकारें बनती और गिरती जा रही हैं। सरमायदारों का फौरी राजनीतिक मकसद है अपनी हुकूमत को स्थायी करना और अपने मुनाफों को बचाये रखते हुये, संकट से बच निकलना। इस खुदगर्ज मकसद को हासिल करने के लिये वे कोई भी तरीका अपनाने को तैयार हैं, चाहे वह कितना अपराधी और

बेरहम तरीका क्यों न हो। वे साम्प्रदायिक और फाशीवादी हिंसा और अन्तर–साम्राज्यवादी जंग छेड़ने को भी तैयार हैं। इस जंग और फाशीवाद के खतरे को खत्म करने के लिये इंकलाब आज वक्त की मांग है।

सरमायदारी हुकूमत के राजनीतिक संकट में मजदूर वर्ग को सर्वहारा इंकलाब का रास्ता निकालने का मौका मिलता है। हिन्दोस्तानी समाज के आज के सबतरफा संकट को मेहनतकशों के पक्ष में हल करने के लिये इंकलाब ही एकमात्र रास्ता है। देश के तमाम मेहनतकश किसानों को शोषण, गरीबी और उत्पीड़न के अंधकार भविष्य से मुक्त करवाने की यह जरूरी शर्त है। हिन्दोस्तान और पूरे दक्षिण एशिया को तबाहकारी साम्राज्यवादी जंग और विदेशी कब्ज़े से बचाने का यही एक तरीका है। कश्मीरी, नागा, मणिपुरी और दूसरी राष्ट्रीयताओं के लोगों के राष्ट्रीय अत्याचार को खत्म करने का यही एक तरीका है। साम्प्रदायिकता और साम्प्रदायिक हिंसा, महिलाओं और दलितों पर अत्याचार, इन्हें हमेशा के लिये खत्म करने का यही एक तरीका है।

साथियों,

मार्क्सवाद का विज्ञान हमें सिखाता है कि लोकतंत्र एक वर्ग संबंधित सवाल है। जब पूंजीवाद चढ़ाव पर था, तब सरमायदार एक प्रगतिशील वर्ग था। उस समय सरमायदार समाज के हर सदस्य की अपनी निजी सम्पत्ति के हक के लिये, जमीन की बिक्री पर पाबंदियों को रद्द करने के लिये, जन्म पर आधारित विशेष अधिकारों को रद्द करने के लिये लड़ रहा था। निजी सम्पत्ति के अधिकारों पर आधारित, मुक्त स्पर्धा के लिये संघर्ष उस समय समाज की प्रगति का रास्ता खोलने का संघर्ष था। बड़े पैमाने पर उद्योग विकसित करने के लिये वह संघर्ष सरमायदारों के लिये जरूरी था।

यूरोप के सरमायदारी लोकतांत्रिक इंकलाबों ने यह ऐलान कर दिया कि अब से समाज के सदस्यों के बीच गैर–बराबरी सिर्फ, किसके पास कितनी पूंजी है, उसी के मुताबिक होगी। सरमायदारी लोकतंत्र के लिये इस संघर्ष की वजह से पूंजी मुख्य ताकत बन गई और सरमायदार समाज का अगुवा वर्ग बन गया। सरमायदार वर्ग ने अपने नुमायंदों की एक व्यवस्था बनाई, जो कानून की नजरों में सरमायदारों की बराबरी और मुक्त स्पर्धा की मान्यता पर आधारित थी।

आज पूंजीवाद इजारेदार पूंजीवाद के सबसे ऊंचे स्तर तक बढ़ गया है, यानि साम्राज्यवाद तक बढ़ गया है। अब सरमायदार वर्ग एक बेहद प्रतिक्रियावादी और लोकतंत्र–विरोधी ताकत बन गया है। वह जीवन के हर क्षेत्र पर अपना रौब और नियंत्रण जमाना चाहता है। आज निजी सम्पत्ति इकट्ठा करने का अधिकार समाज के विकास के रास्ते में सबसे बड़ी रुकावट बन गई है, इंसानों और जनसमुदायों के हकों को हासिल करने के रास्ते में सबसे बड़ी रूकावट बन गई है। मजदूरों, किसानों, राष्ट्रों और राष्ट्रीयताओं के हकों को हासिल करने के रास्ते में बड़ी रुकावट बन गई है। सरमायदारी लोकतंत्र अब एक प्रगतिशील या लोकतांत्रिक ताकत नहीं रह गया है। वह सामाजिक प्रगति के लिये रुकावट बन गया है।

2001 में जो सबसे हाल की जनगणना हुई थी, उसमें यह दिखता है कि मजदूर वर्ग, जिसके पास अपनी श्रम शक्ति के अलावा कोई और जायदाद नहीं है, वह आधी आबादी से ज्यादा है। मजदूर वर्ग हिन्दोस्तानी समाज में सबसे बड़ी संख्या वाला वर्ग है, फिर किसान वर्ग है। इन दोनों मेहनतकश वर्गों को मिलाकर, 90 प्रतिशत आबादी बनती है। यह मेहनतकश बहुसंख्या अपने हकों की मांग कर रही है। यही आज हिन्दोस्तान में मुख्य लोकतंत्र का संघर्ष है।

सिर्फ मजदूर वर्ग ही समाज के इस स्तर पर, लोकतांत्रिक तब्दीली को पूरा करने का संघर्ष, सभी प्रकार के पिछड़े, इंसानियत की बेइज़्ज़ती करने वाले रिवाजों से मुक्ति पाने का संघर्ष आगे ले जा सकता है। मजदूर वर्ग सामाजिक जायदाद पर आधारित नये समाज के लिये लड़कर सामाजिक प्रगति का द्वार खोलेगा।

आज समाज में निजी जायदाद वाले मेहनत करने वालों से ज्यादा ऊंचे माने जाते हैं। इस समाज में यह जाहिर है कि जायदाद वाले वर्ग मेहनतकशों के हकों को दबायेंगे। परन्तु समाजवादी समाज सामाजिक जायदाद पर आधारित है। उसमें इंसान की मेहनत को सभी दूसरी वस्तुओं से ज्यादा महत्व दिया जाता है। आज समाज जिस स्तर पर है, इसमें सिर्फ ऐसी समाजवादी व्यवस्था ही इंसानों के हकों को पूरी तरह मान्यता दिला सकती है।

महान् अक्तूबर समाजवादी इंकलाब ने आधुनिक समाज के अन्दर मेहनतकशों के व्यक्तिगत और सामूहिक हकों को हासिल करने का

रास्ता दिखलाया था। समाजवाद के प्रथम दौर में, आम लोकतंत्र की स्थापना की गई थी। इसमें सभी मेहनतकशों के हकों को मान्यता और गारंटी दी गई थी। इंसान लायक हालतों में काम करने और जीने का अधिकार भी इनमें शामिल था। सोवियत संघ के अंदर हर राष्ट्र के लोगों को यह हक दिया गया था कि वे अपनी जुबान में सरकारी काम–काज कर सकते थे और किसी भी समय सोवियत संघ से अलग हो सकते थे। नागरिकों के हकों को उनके वर्ग के अनुसार मान्यता दी जाती थी। इंकलाब से पहले जिन जायदाद वाले वर्गों को सारे हक प्राप्त थे, उनसे वे सारे हक छीने गये थे।

जब समाजवाद के आर्थिक आधार को स्थापित कर दिया गया था, जब पूंजीवाद और शोषक वर्गों को सोवियत समाज से मिटा दिया गया था, तब हकों की परिभाषा और मान्यता को और विस्तृत करने की समस्या आगे आयी। तब यह जरूरी हो गया कि हकों को वर्ग के आधार पर नहीं बल्कि इंसानियत के आधार पर मान्यता दी जाये। समाज के हर सदस्य को इंसान होने के नाते मानव अधिकार दिलवाने थे। 1936 का संविधान ऐसा करने का आधार बना। परन्तु वह सिर्फ कागज़ पर ही रह गया क्योंकि क्रुश्चेववादियों ने सोवियत संघ की दिशा बदल दी, कम्युनिस्ट पार्टी और सोवियत राज्य के वर्ग स्वरूप को बदल दिया।

अक्तूबर इंकलाब के बाद के इस दौर में जब लोगों के हकों पर इतने हमले हो रहे हैं, तो कम्युनिस्टों का क्या काम होना चाहिये? लोकतंत्र और हकों की परिभाषा पर कम्युनिस्टों को सबसे आगे होना होगा। हकों को मान्यता दिलाने के मुद्दे पर आज समाज में जो सबसे ऊंची समझ है, उसके अनुसार हमें अपना तर्क पेश करना होगा। हमें यह कहना होगा कि 1936 के सोवियत संविधान से पहले की कोई समझ हमें मंजूर नहीं है। अब तक हकों के बारे में जो सबसे ऊंची समझ मानी जाती है, वही हमें मंजूर है। वहीं से शुरु होकर हमें आगे बढ़ना होगा।

हिन्दोस्तान के 1950 के संविधान के अनुसार, संप्रभुता या सबसे ऊंची ताकत, कानूनी तौर पर, राष्ट्रपति के हाथों में है। राष्ट्रपति प्रधान मंत्री की अगुवाई में कैबिनेट या मंत्री मंडल की सलाह के अनुसार काम करने को बाध्य है। इस तरह के बुनियादी ढ़ांचे में फैसले लेने की ताकत को एक हुक्मरान गुट के हाथों में केंद्रित कर

दिया गया है। इस गुट की अगुवाई प्रधान मंत्री करते हैं और इसे सरमायदारों की हुक्मरान पार्टी या गठबंधन नामांकित करता है।

इस व्यवस्था को बदलकर मजदूर वर्ग को राज्य सत्ता का एक नया ढांचा बनाने के लिये लड़ना होगा। यह ढांचा लोकतांत्रिक केन्द्रीयवाद के असूलों पर आधारित होगा। कार्यकारी दल को वैधानिक दल के अधीन होना होगा, और वैधानिक दल को पूरी जनता के अधीन होना होगा।

हुक्मरान गठबंधन और संसदीय विपक्ष, दोनों के सरमायदार यह दावा करते हैं कि हिन्दोस्तानी लोकतंत्र और उसकी राजनीतिक प्रक्रिया को सुधारना जरूरी है, परन्तु मौजूदे ढांचे के अन्दर ही, और 1950 के संविधान के "बुनियादी ढांचे" को बिगाड़े बिना। यानि कि, वे वर्तमान राज्य और राजनीतिक प्रक्रिया को बरकरार रखना चाहते हैं, जिसमें मजदूर–किसान को राज्य सत्ता से दूर रखा जाता है।

वर्तमान राज्य और नुमायंदों के लोकतंत्र की राजनीतिक प्रक्रिया को बरकरार रखने से मजदूर–किसान को कोई फायदा नहीं है। मजदूर–किसान की समस्याओं को हल करने के लिये राज्य और राजनीतिक प्रक्रिया को नींव से लेकर ऊपर तक पूरी तरह बदल डालना होगा, नया रूप दिलाना होगा। वर्तमान हिन्दोस्तानी समाज की उत्पादक ताकतों, मजदूरों, किसानों, औरतों और जवानों, को बस्तीवादी और साम्प्रदायिक नींव की जगह पर एक आधुनिक नींव डालनी होगी। इस सर्वहारा इंकलाब के लक्ष्य को हासिल करने के लिये फौरी काम है हिन्दोस्तान के लोकतांत्रिक नवनिर्माण के कार्यक्रम के इर्द राजनीतिक और सामाजिक ताकतों का गठबंधन बनाना, सरमायदारों के बिना और सरमायदारों के खिलाफ़।

भाजपा के नेता यह दावा करते हैं कि वे प्राचीन हिन्दोस्तानी सोच–विचार के वारिस हैं। वे कहते हैं कि हिन्दोस्तानी मूल्यों के अनुसार, सिर्फ मेहनतकशों का ही अपने देश के प्रति फर्ज़ होना चाहिये। इसके अनुसार, मजदूर–किसान के अपने हकों के लिये सभी संघर्ष "हिन्दोस्तानी मूल्यों" के खिलाफ़ हैं। इसके अलावा, हिन्दोस्तानी राज्य के कानूनी किताबों में जो तमाम काले कानून हैं, उनके अनुसार ये संघर्ष गैर–कानूनी हैं। दूसरी ओर, पूंजीवादी निजी सम्पत्ति का हक, दूसरों का शोषण करके पूंजी कमाने का हक, इन हकों को

मान्यता देने से कांग्रेस पार्टी या भाजपा को कोई एतराज़ नहीं है। निजीकरण और उदारीकरण के यूरोकेंद्रित मूल्यों को मान्यता देने में उन्हें कोई तकलीफ नहीं होती। ऐतिहासिक तौर पर जो हिन्दोस्तानी मूल्य बने हैं, जैसे कि शिक्षा और स्वास्थ्य सेवा निःशुल्क होना चाहिये, इनको पांव तले कुचलने में उन्हें कोई तकलीफ़ नहीं होती।

हिन्दोस्तानी फलसफ़ा या दर्शन शास्त्र के अनुसार, हक और फर्ज़ का आपस में नज़दीकी का संबंध है। एक के बिना दूसरा नहीं हो सकता। साथ ही साथ, समाज के संदर्भ में ही हक और फर्ज़ के बारे में सोचा जा सकता है, हवा में नहीं। इसलिये, हक और फर्ज़ सिर्फ किसी अलग व्यक्ति के नहीं होते बल्कि समाज के हिस्सा बतौर व्यक्ति के हक और फर्ज़ बनते हैं।

"प्रजा" शब्द का मतलब है वह जो राजा को जन्म देता है। यह ऋग्वेद और यर्जुवेद में दिये गये राजनीतिक सिद्धांत के विचारों के अनुसार है। प्राचीन वेदों के अनुसार, सभा, या जनता की आम सभा ही यह फैसला करती थी कि कौन राजा बनेगा। राजा का हक और फर्ज अपनी प्रजा की जरूरतें पूरी करना माना जाता था। अगर राजा अपने इस फर्ज़ को पूरा करने में असमर्थ पाया जाता था, तो वह राज करने का हक खो देता था।

जब समाज वर्गों में बंट गया, तब लोगों का यह चुनने का हक कि कौन उन पर राज करेगा, यह हक पूरा–पूरा नकारा गया। यह जरूर माना जाता था कि अगर राजा जनता की हिफ़ाज़त नहीं करता या नहीं कर सकता, तो उसे हटाना जनता का हक है, ताकि जब भी कभी, हुक्मरान राजा को गिराना चाहते थे तो जनता को अपने पीछे लामबंद कर सकते थे। मगर नया राजा कौन होगा, यह चुनने का हक जनता का नहीं रहा। यह भगवान की मर्जी के अनुसार, कुछ गिने–चुने, ऊंचे जन्म के लोगों का हक माना जाता था।

बर्तानवी बस्तीवादियों ने यह विचार फैलाया कि हिन्दोस्तानी उपमहाद्वीप के लोग खुद अपना प्रशासन नहीं कर सकते, कि जनता को उनके ऊपर बैठी किसी ताकत की जरूरत है जो उनकी खुशहाली की देखभाल करेगी। बस्तीवादियों ने यह विचार भी फैलाया कि सभी हिन्दोस्तानी लोग सिर्फ अध्यात्मिक हैं, कि वेद और अन्य प्राचीन ग्रन्थ सिर्फ धार्मिक ग्रंथ हैं। उन्होंने यह सोच फैलाया कि बर्तानवी लोग

नैतिक तौर पर हिन्दोस्तानियों से ज्यादा सूझबूझ वाले हैं, इसलिये हिन्दोस्तानियों पर राज करना उनका अधिकार है। इसे "श्वेत चमड़े वाले का बोझ" बताकर पेश किया गया। भक्ति आन्दोलन से जो विचार पैदा हुये थे, उन्हें बर्तानवी बस्तीवादियों ने दबाया। भक्ति आन्दोलनकारी, भक्त, उस समय के उत्पादक वर्गों के नुमायंदे थे। उन्होंने अधिकार और हक का झंडा बुलंद किया था, निजी जायदाद के आधार पर नहीं बल्कि उस समय की उनकी हालतों के आधार पर। उन्होंने अपने ज़मीर के अनुसार चलने का झंडा बुलंद किया था। जैसा कि कबीर ने कहा था, "सूरा सो पहचानिये जो लड़दे दीन के हेत, पुर्जा–पुर्जा हो मारे पर कभूं न छोड़दे खेत।" (यानि, वीर वह माना जाये जो गरीबों के खातिर लड़ता है और जो टुकड़े–टुकड़े कर दिये जाने पर भी अपना हक नहीं छोड़ता है)।

1857 की प्रथम आजादी की लड़ाई के एक नेता, बहादुर शाह ज़फर ने यह ऐलान किया था कि जब बर्तानवी हाकिमों को हरा दिया जायेगा, तब हिन्दोस्तान की जनता के पास संप्रभुता होगी; जनता यह फैसला करेगी कि हुक्मरान कौन होगा। ऐसा विचार प्रकट करने के लिये, सज़ा बतौर बस्तीवादियों ने उन्हें कारागार में बंद रखा और फिर उन्हें मार डाला था।

हिन्दोस्तानी समाज का इतिहास यह दिखाता है कि फर्ज और प्रभुसत्ता किसकी होगी, इन हकों के बारे में, आपस में विरोधी सोचों के बीच में, काफी लंबा संघर्ष चला है। जो भी आज समाज की प्रगति के रास्ते पर चलना चाहता है, उसे बीते इतिहास में से उन विचारों को आगे लाना होगा जो सबसे पाक हैं। यह विचार आगे लाना होगा कि जनता की ही संप्रभुता होनी चाहिये, कि सभी राजनीतिक संस्थान जनता के अधीन होने चाहिये। जो लोग बीते इतिहास से सबसे पिछड़ी बातों को बढ़ावा देना चाहते हैं और इस तरह समाज की प्रगति को रोकना चाहते हैं, उनका हमें डटकर मुकाबला करना होगा।

अंदरूनी और बाहरी दुश्मनों के खिलाफ़ हमारे लोगों ने सदियों से जो संघर्ष लड़े हैं, उनकी वजह से देश के मजदूर–किसान में इंकलाब की गहरी तमन्ना है। आज हिन्दोस्तानी कम्युनिस्टों को इस इंकलाबी हिन्दोस्तानी परंपरा पर आधारित होना पड़ेगा, न कि धर्मनिरपेक्षता जैसी पुरानी, विदेश से ली गई सोच पर, और न ही यूरोपीय

सरमायदारी लोकतंत्र, उसकी सड़ी–गली, पुरानी "अच्छी सरकार" बनाने के दिवालिये विचारों पर। हिन्दोस्तानी कम्युनिस्टों को इस ख्वाब में नहीं रहना चाहिये कि सरमायदारों का कोई तबका आज लोकतंत्र के संघर्ष को अगुवाई दे सकता है।

"मैनिफेस्टो आफ़ दी कम्युनिस्ट पार्टी" को लिखने से पहले मार्क्स और एंगेल्स ने जर्मन फलसफ़ा, अंग्रेज राजनीतिक अर्थशास्त्र और फ्रेंच समाजवाद का आलोचनात्मक ढंग से अध्ययन किया था। हमारे देश के कम्युनिस्टों को फलसफ़ा, अर्थशास्त्र और राजनीति में जो भी सिद्धान्त सामने आये हैं, उनका आलोचनात्मक अध्ययन करना होगा, सिर्फ यूरोप और बाकी दुनिया के ही नहीं बल्कि इस उपमहाद्वीप के भी, प्राचीन काल से आज तक, ताकि लोकतंत्र की आधुनिक हिन्दोस्तानी परिभाषा दी जाए और इंकलाब के हिन्दोस्तानी सिद्धान्त को विकसित किया जाए।

साथियों,

20वीं सदी की शुरुआत में लेनिन ने सबसे बुनियादी निष्कर्ष यह निकाला था कि पूंजीवाद अपने सबसे ऊंचे स्तर, साम्राज्यवाद, तक पहुंच गया है और साम्राज्यवाद सर्वहारा इंकलाब की पूर्वसंध्या है। हम आज भी साम्राज्यवाद और सर्वहारा इंकलाब के युग में से गुज़र रहे हैं। आधुनिक समाज के अन्दर जो आपस में विरोधी धारायें समाज को आज चीर रही हैं, उनका स्वाभाविक और तर्कसंगत नतीजा सर्वहारा क्रान्ति है। इन आपस में विरोधी धाराओं का समाधान निकालने और एक नया समाज, समाज का अगला स्तर, पैदा करने का काम ही यह सर्वहारा इंकलाब है।

दुख की बात तो यह है कि हिन्दोस्तान के कम्युनिस्ट आन्दोलन में जो लोग अगुवा स्थानों पर हैं, उन्होंने मजदूर वर्ग को इंकलाब के सिद्धान्त से लैस होने से रोक रखा है। अगर हिन्दोस्तान में इंकलाब को कामयाब होना है, अगर हिन्दोस्तानी समाज को आगे आने वाले सरमायदारों के नये–नये हमलों से बचाना है, तो हिन्दोस्तान के कम्युनिस्ट आंदोलन को अपने इस इतिहास से नाता तोड़ना होगा।

वह बीता इतिहास क्या है जिससे हिन्दोस्तानी कम्युनिस्टों को नाता तोड़ना होगा? वह इतिहास है सरमायदारों और कांग्रेस पार्टी की पूंछ बनकर चलने का रास्ता। हिन्दोस्तान के सरमायदारों के बीच किसी

"प्रगतिशील" तबके की तलाश करना, फिर मजदूर वर्ग आन्दोलन को सरमायदारों के इस या उस तबके की पूंछ बना देना, उस बीते इतिहास से नाता तोड़ना होगा। वह पूंजीवाद को सुधारने की कोशिश करने का रास्ता है, पूंजीवाद की कब्र खोदने का नहीं। वह "राष्ट्रीय एकता और अखंडता" की हिफाजत करने के बहाने हिन्दोस्तानी राज्य द्वारा अलग–अलग राष्ट्रीयताओं के लोगों के दमन को मंजूरी देने का रास्ता है। वह हिन्दोस्तानी राज्य को "साफ–सुथरा" करने, "सजाने–संवारने" का रास्ता है, उसे खत्म करने का नहीं, उसकी जगह पर मजदूर–किसान का नया राज्य स्थापित करने का नहीं। वह यूरोपीय सरमायदारी सिद्धान्तों को रटते रहने का रास्ता है और हिन्दोस्तानी इंकलाब के सिद्धान्त को विकसित करने के काम की उपेक्षा का रास्ता है।

हिन्दोस्तानी इंकलाब का मुख्य राजनीतिक काम यह है कि एक ऐसे नये राज्य की परिभाषा दी जाये और उसकी स्थापना की जाये, जिसमें सभी मेहनतकशों का सुख और रक्षा सुनिश्चित होगी और कोई एक व्यक्ति किसी दूसरे का शोषण नहीं करेगा। ऐसा राज्य स्थापित करने और उसका निर्माण करने का काम, राज्य और समाज के सभी सदस्यों के हक और फर्ज़ की परिभाषा देने वाला नया संविधान बनाने का काम, यह इंकलाबी जनसमुदाय, मजदूर, किसान, औरत और जवान, का काम होना पड़ेगा। मजदूर वर्ग इसमें अगुवाई देगा। कम्युनिस्टों का काम है मजदूर वर्ग को अगुवाई देना, ताकि वह इस ऐतिहासिक महत्ता के काम में कामयाबी पा सके।

जब भी हम कम्युनिस्ट हिन्दोस्तानी राज्य के आज के संकट का मुकाबला करने और सरमायदारों के हमलों का मुकाबला करने के तौर–तरीके बनाते हैं, तो हमें इंकलाब और समाजवाद के रणनैतिक लक्ष्य को ध्यान में रखना होगा। हमें ऐसी चाल चलनी होगी ताकि सरमायदारी हुकूमत के वर्तमान संकट से फायदा उठाकर इंकलाब के हालात तैयार किये जा सकें।

आज हिन्दोस्तानी कम्युनिस्टों का काम है मजदूर वर्ग की लड़ाकू एकता बनाना। यह एकता सरमायदारों के कार्यक्रम के खिलाफ़ और मजदूर वर्ग के अपने विकल्प के कार्यक्रम के आधार पर होगी। इस तरह मजदूर वर्ग देश की राजनीति में एक आज़ाद ताकत बतौर आगे

आ सकेगा। मजदूर वर्ग के फौरी कार्यक्रम का मकसद है पूंजीवादी हमले को रोकना और अर्थव्यवस्था को नई दिशा दिलाना, ताकि सबको सुख और सुरक्षा मिले। राजनीतिक प्रक्रिया का पूरा–पूरा नवीकरण करना, ताकि जनसमुदाय के हाथ में संप्रभुता हो। हिन्दोस्तान के अंतर्राष्ट्रीय संबंधों को समानता, आपसी हित और साम्राज्यवाद के कट्टर विरोध के आधार पर फिर से स्थापित करना।

मजदूर वर्ग के अपने आजाद कार्यक्रम के इर्द उसकी एकता बनाने के लिये, यह जरूरी है कि कम्युनिस्ट वहां–वहां जायें जहां–जहां मजदूर संघर्ष कर रहे हैं, और उन्हें इंकलाबी सिद्धान्त और राजनीति से लैस करें। ट्रेड यूनियन आन्दोलन और कम्युनिस्ट आन्दोलन के बीच जो दीवार खड़ी की गई है, उसे तोड़ना जरूरी है। ट्रेड यूनियनों की मीटिंगों से राजनीतिक पार्टियों को बाहर रखने से मजदूरों को राजनीतिक चर्चा और वाद–विवाद के मौके से वंचित किया जाता है। फिर उन्हें चुनाव के समय कहा जाता है कि कांग्रेस पार्टी या किसी "धर्मनिरपेक्ष मोर्चे" को वोट दो। इस तरह, मजदूर वर्ग के सबसे संगठित तबकों को भी सरमायदारी राजनीति के साथ बांध कर रखा जाता है, और इस या उस पार्टी या गठबंधन का वोट बैंक बना दिया जाता है। इस बंधन को तोड़ना आज हिन्दोस्तान के कम्युनिस्टों का एक बहुत जरूरी और महत्वपूर्ण काम है।

अगर मजदूर वर्ग को एकजुट होकर इंकलाब के रास्ते पर चलना है, तो यह जरूरी है कि उसे अपना रणनैतिक लक्ष्य और फौरी कार्यक्रम साफ–साफ पता हो, और हिन्दोस्तानी राज्य के बारे में उसके मन में कोई भ्रम न हो। मजदूर वर्ग के अपने आजाद कार्यक्रम के इर्द उसकी लड़ाकू एकता बनाने के लिये यह जरूरी है कि सरमायदार वर्ग से समझौता करने वालों के खिलाफ़, सैद्धान्तिक, विचारधारात्मक और राजनीतिक विचारों का टक्कर लिया जाए। इस संघर्ष से एक पार्टी में हिन्दोस्तानी कम्युनिस्टों की एकता को फिर से स्थापित करने का रास्ता बनेगा।

पूंजीवाद का घोर संकट और सरमायदारों के फाशीवादी हमले और साम्राज्यवादी मंसूबे, इन सब की वजह से मजदूरों, किसानों, थोड़े–बहुत अमीर किसानों, कुछ जायदाद वाले वर्गों, यानि बहुत बड़ी जनसमुदाय पर असुरक्षा की छाया फैली हुई है। मजदूर वर्ग को इस

मौके का फायदा उठाकर, सरमायदारों के हमलों के खिलाफ़ एक व्यापक राजनीतिक मोर्चा बनाना होगा। मजदूर वर्ग को किसानों, पीड़ित राष्ट्रीयताओं, आदिवासी लोगों, शोषित–पीड़ित जातियों, अल्पसंख्यकों, महिलाओं और नौजवानों के साथ एकता बनानी होगी। हिन्दोस्तान के लोकतांत्रिक नवीकरण के कार्यक्रम के आधार पर यह एकता बनानी होगी।

दिसंबर 2000 के कानपुर कम्युनिस्ट कानफरेंस में यह नारा दिया गया था "एक मजदूर वर्ग, एक कार्यक्रम, एक कम्युनिस्ट पार्टी!" मजदूर वर्ग और उसकी कम्युनिस्ट पार्टी की एकता हासिल करने के लिये एक जरूरी शर्त यह है कि कम्युनिस्ट आन्दोलन के रास्ते में जो रुकावटें हैं, उनके खिलाफ सभी इंकलाबी कम्युनिस्टों को खुलेआम व कट्टर संघर्ष करना होगा।

जब इंकलाब को भारी नुकसान पहुंचाया जा रहा है, तब इंकलाबी कम्युनिस्ट चुप नहीं बैठ सकते। ऐसा नहीं हो सकता है कि हम चुपचाप बैठे देखते रह जायें और अपने आपको कम्युनिस्ट कहलाने वाले कुछ लोग पूंजीवादी व्यवस्था और सरमायदारी राज्य का बचाव करें, मजदूरों को "अपने" सरमायदारों और उनके साम्राज्यवादी मंसूबों की पूंछ बनाते रहें। हमें मजदूर वर्ग आन्दोलन के सभी कार्यकर्ताओं, सभी कम्युनिस्टों के सामने खुलकर बहादूरी से अपनी बात रखनी चाहिये। इंकलाब और कम्युनिज़्म का लक्ष्य कुछ पंडितों या आन्दोलन के कुछ "जाने–माने नेताओं" की निजी जायदाद नहीं है। इंकलाब हिन्दोस्तान के मजदूरों, किसानों, औरतों और नौजवानों का जन्मसिद्ध अधिकार है। इस जन्मसिद्ध अधिकार को पाने के लिये, कम्युनिस्टों का काम है मेहनतकशों और शोषित–पीड़ित जनता को प्रोत्साहित और संगठित करना।

साथियों,

अंत में, मैं लोक आवाज को फिर से बधाई देना चाहता हूं, कि हिन्दोस्तानी राज्य और इंकलाब पर यह गोष्ठी आयोजित करके, इस समय यह बेहद जरूरी पहल ली गई है। आज यह हिन्दोस्तानी कम्युनिस्टों के सामने सबसे महत्वपूर्ण मुद्दा है, जिसका अध्ययन करना होगा, जिसमें हमें परिपक्व होना होगा। तभी हम मजदूर वर्ग के संघर्ष

को अगुवाई दे सकेंगे और हिन्दोस्तान व दुनिया में इंकलाब की जीत की हालतें तैयार कर सकेंगे।

आज आप सब के चेहरों पर इतनी उत्सुकता, इतना जोश देखते हुये, मुझे पूरा भरोसा मिलता है कि वह दिन दूर नहीं है, जब हिन्दोस्तान का मजदूर वर्ग राजनीतिक मंच पर एक प्रचंड तूफान की तरह आगे आयेगा, एक लड़ाकू कार्यक्रम के साथ, एक कम्युनिस्ट पार्टी की अगुवाई में, और सभी शोषित–पीड़ित जनता उसके साथ होगी। दुनिया में कोई भी ताकत उसे नहीं रोक पायेगी। हिन्दोस्तानी सरमायदारों का हारना और हिन्दोस्तानी इंकलाब की जीत, ये दोनों ही अनिवार्य हैं। मेहनतकशों के पास अपनी जंजीरों के अलावा और कुछ खोने का नहीं है। पर हमारे सामने पूरी दुनिया जीतने के लिये है।

साम्राज्यवाद मुर्दाबाद! फाशीवाद मुर्दाबाद!

आतंकवाद विरोध के बहाने प्रतिक्रियावादी जंग मुर्दाबाद!

हिन्दोस्तानी राज्य की सांप्रदायिकता और धर्मनिरपेक्षता मुर्दाबाद!

हमारे शहीदों की यादें और इंकलाबी परंपरायें अमर रहें!

सिर्फ कम्युनिज़्म ही हिन्दोस्तान को बचा सकता है!

इंकलाब जिंदाबाद!